



शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर महाराष्ट्र

दूरशिक्षा और ऑनलाईन शिक्षा केंद्र

बी. ए. भाग- 3 हिंदी

सत्र ५ : प्रश्नपत्र IX (Major Mandatory)

सत्र ६ : प्रश्नपत्र XII (Major Mandatory)

भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार सुधारित पाठ्यक्रम
(शैक्षिक वर्ष 2026-27 से)

© कुलसचिव, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर (महाराष्ट्र)

प्रथम संस्करण : 2026

बी. ए. भाग 3 हिंदी - भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा

सभी अधिकार विश्वविद्यालय के अधीन। शिवाजी विश्वविद्यालय की अनुमति के बिना किसी भी सामग्री की नकल न करें।

प्रतियाँ : 50



प्रकाशक :

डॉ. व्ही. एन. शिंदे

कुलसचिव,

शिवाजी विश्वविद्यालय,

कोल्हापुर - 416 004.



मुद्रक :

श्री. बी. पी. पाटील

अधीक्षक,

शिवाजी विश्वविद्यालय मुद्रणालय,

कोल्हापुर - 416 004.



ISBN- 978-81-68244-04-7

★ दूरशिक्षा और ऑनलाईन शिक्षा केंद्र और शिवाजी विश्वविद्यालय की जानकारी निम्नांकित पते पर मिलेगी-
शिवाजी विश्वविद्यालय, विद्यानगर, कोल्हापुर-416 004 . (भारत)

दूरशिक्षा और ऑनलाईन शिक्षा केंद्र, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर

■ सलाहकार समिति ■

प्रा. (डॉ.) आर. के. कामत

कुलगुरु,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) ज्योती जाधव

प्र-कुलगुरु,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) प्रकाश पवार

राज्यशास्त्र अधिविभाग,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) एस. विद्याशंकर

कुलगुरु, केएसओयू,
मुक्तगंगोत्री, म्हैसूर, कर्नाटक-५७० ००६

डॉ. राजेंद्र कांकरिया

जी-२/१२१, इंदिरा पार्क,
चिंचवडगांव, पुणे-४११ ०३३

प्रा. (डॉ.) सीमा येवले

गीत-गोविंद, फ्लॅट नं. २,
११३९ साईक्स एक्स्टेंशन,
कोल्हापूर-४१६००१

डॉ. संजय रत्नपारखी

डी-१६, शिक्षक वसाहत, विद्यानगरी, मुंबई विद्यापीठ,
सांताक्रुझ (पु.) मुंबई-४०० ०९८

प्रा. (डॉ.) कविता ओझा

संगणकशास्त्र अधिविभाग,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) चेतन आवटी

तंत्रज्ञान अधिविभाग,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) व्ही. व्ही. मेंदरगी

प्र. अधिष्ठाता, वाणिज्य व व्यवस्थापन विद्याशाखा,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) एम. एस. देशमुख

प्र. अधिष्ठाता, मानवविज्ञान विद्याशाखा,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) आर. व्ही. गुरव

प्र. अधिष्ठाता, विज्ञान व तंत्रज्ञान विद्याशाखा,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. (डॉ.) ए. बी. साळी

प्र. अधिष्ठाता, आंतर-विद्याशाखीय अभ्यास विद्याशाखा
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

डॉ. व्ही. एन. शिंदे

कुलसचिव,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

डॉ. ए. एन. जाधव

संचालक, परीक्षा व मूल्यमापन मंडळ,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

श्रीमती सुहासिनी सरदार पाटील

वित्त व लेखा अधिकारी,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

प्रा. डॉ. पी. एस. पाटणकर (सदस्य सचिव)

संचालक, दूरशिक्षण व ऑनलाईन शिक्षण केंद्र,
शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर

हिंदी अध्ययन मंडल

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) साताप्पा शामराव सावंत
विलिंग्डन कॉलेज, सांगली

सदस्य

- प्रो. (डॉ.) नितीन चंद्रकांत धवडे
मुधोजी कॉलेज, फलटण, जि. सातारा
- डॉ. मनिषा बाळासाहेब जाधव
आर्ट्स अँड कॉमर्स कॉलेज, ११७, शुक्रवार पेठ,
सातारा-४१५ ००२.
- प्रो. (डॉ.) वर्षारानी निवृत्ती सहदेव
श्री विजयसिंह यादव कॉलेज, पेठ वडगाव,
जि. कोल्हापुर
- प्रो. (डॉ.) हणमंत महादेव सोहनी
सदाशिवराव मंडलीक महाविद्यालय, मुरगुड, ता.
कागल, जि. कोल्हापुर
- प्रो. (डॉ.) अशोक विठोबा बाचुळकर
आजरा महाविद्यालय, आजरा, जि. कोल्हापुर
- डॉ. भास्कर उमराव भवर
कर्मवीर हिरे आर्ट्स, सायन्स, कॉमर्स अँड एज्युकेशन
कॉलेज, गारगोटी, ता. भुदरगड, जि. कोल्हापुर
- डॉ. संग्राम यशवंत शिंदे
आमदार शशिकांत शिंदे महाविद्यालय, मेढा,
ता. जावळी, जि. सातारा
- प्रो. (डॉ.) अनिल मारुती साळुंखे
यशवंतराव चव्हाण महाविद्यालय, करमाळा,
जि. सोलापुर-४१३२०३
- डॉ. गजानन सुखदेव चव्हाण
श्रीमती जी.के.जी. कन्या महाविद्यालय,
जयसिंगपुर, ता. शिरोळ, जि. कोल्हापुर
- प्रो. (डॉ.) सिद्राम कृष्णा खोत
प्रा. डॉ. एन. डी. पाटील महाविद्यालय, मलकापुर,
जि. कोल्हापुर
- प्रो. (डॉ.) उत्तम लक्ष्मण थोरात
आदर्श कॉलेज, विटा, जि. सांगली
- डॉ. परशुराम रामजी रगडे
शंकरराव जगताप आर्ट्स अँड कॉमर्स कॉलेज,
वाघोली, ता. कोरेगाव, जि. सातारा

अपनी बात

शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर की दूरशिक्षा और ऑनलाईन शिक्षा केंद्र के अंतर्गत बी. ए. भाग-3 के हिंदी विषय के छात्रों के लिए अध्ययन सामग्री का निर्माण करना एक आनंद की अनुभूति है। दूरशिक्षा के छात्रों को महाविद्यालय जाने का अवसर नहीं मिल पाता, अतः उनके अध्ययन में कोई बाधा न हो इस उद्देश्य से शिवाजी विश्वविद्यालयने इस विभाग की शुरुआत की है।

दूरशिक्षा के छात्र भी शिक्षा के इस मुख्य प्रवाह में आए तथा। दूरशिक्षा के छात्रों को पाठ्यक्रम, प्रश्नपत्र का स्वरूप, अंकवितरण उपलब्ध हो इस हेतु से इस स्वयं अध्ययन सामग्री का लेखन किया गया है। इसमें विश्वविद्यालय की सामाजिक संवेदनशील दिखाई देती है।

प्रत्येक इकाई लेखक ने अपना अध्यापन अनुभव, शैली तथा दूरशिक्षा के छात्रों की क्षमता ध्यान में रखकर सामग्री तैयार की है। अपनी-अपनी इकाई का समग्र लेखन कर विविध प्रश्न और उनके उत्तरों को भी जोड़ दिया गया है। हमें विश्वास है कि यह सामग्री छात्रों के लिए लाभप्रद साबित होगी।

शिवाजी विश्वविद्यालय के मा. कुपति, कुलसचिव, दूरशिक्षा विभाग के संचालक, हिंदी अध्ययन मंडल के अध्यक्ष एवं सभी सदस्य तथा इकाई लेखकों के प्रति हम आभार प्रकट करते हैं।

■ संपादक ■

प्रो. (डॉ.) वर्षारणी सहदेव
श्री. विजयसिंह यादव महाविद्यालय, पेठवडगाव,
ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापूर

प्रो. (डॉ.) भास्कर भवर
कर्मवीर हिरे आर्ट्स, कॉमर्स, सायन्स
अॅन्ड एज्युकेशन कॉलेज गारगोटी,
ता. भुदरगड, जि. कोल्हापूर

इकाई लेखक	सत्र ५	सत्र ६
★ प्रो. (डॉ.) वर्षारानी सहदेव, श्री. विजयसिंह यादव महाविद्यालय, पेठवडगाव, ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापूर	1	2
★ प्रो. (डॉ.) एस. बी. बिडकर, डॉ. घाळी कॉलेज, गडहिंग्लज, ता. गडहिंग्लज, जि. कोल्हापूर	2	-
★ प्रो. (डॉ.) भास्कर भवर, कर्मवीर हिरे आर्ट्स, कॉमर्स, सायन्स अँड एज्युकेशन कॉलेज गारगोटी, ता. भुदरगड, जि. कोल्हापूर	-	1

■ संपादक ■

प्रो. (डॉ.) वर्षारानी सहदेव
श्री. विजयसिंह यादव महाविद्यालय, पेठवडगाव,
ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापूर

प्रो. (डॉ.) भास्कर भवर
कर्मवीर हिरे आर्ट्स, कॉमर्स, सायन्स
अँड एज्युकेशन कॉलेज गारगोटी,
ता. भुदरगड, जि. कोल्हापूर

अनुक्रमणिका

इकाई	पाठ्यविषय	पृष्ठ
सत्र ५		
1.	भाषा की परिभाषाएँ, भाषा की विशेषताएँ, भाषा परिवर्तनशीलता के कारण	1
2.	हिंदी भाषा का उद्भव और विकास, लिपि विकास का सामान्य परिचय, देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता	21
सत्र ६		
1.	भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ, भाषाविज्ञान के अध्ययन का महत्व, मानक वर्तनी के नियम	38
2.	भाषा-विज्ञान का अन्य ज्ञान-विज्ञानों से संबंध	62

हर इकाई की शुरूआत उद्देश्य से होगी, जिससे दिशा और आगे के विषय सूचित होंगे-

- (१) इकाई में क्या दिया गया है?
- (२) आपसे क्या अपेक्षित है?
- (३) विशेष इकाई के अध्ययन के उपरांत आपको किन बातों से अवगत होना अपेक्षित है?

स्वयं-अध्ययन के लिए कुछ प्रश्न दिए गए हैं, जिनके अपेक्षित उत्तरों को भी दर्ज किया है। इससे इकाई का अध्ययन सही दिशा से होगा। आपके उत्तर लिखने के पश्चात् ही स्वयं-अध्ययन के अंतर्गत दिए हुए उत्तरों को देखें। आपके द्वारा लिखे गए उत्तर (स्वाध्याय) मूल्यांकन के लिए हमारे पास भेजने की आवश्यकता नहीं है। आपका अध्ययन सही दिशा से हो, इसलिए यह अध्ययन सामग्री (Study Tool) उपयुक्त सिद्ध होगी।

इकाई क्र. 1

भाषा की परिभाषाएँ, भाषा की विशेषताएँ, भाषा परिवर्तनशीलता के कारण

अनुक्रमणिका

1. उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. विषय विवेचन
 - 3.1. - भाषा की परिभाषाएँ ।
 - 3.2. - भाषा की विशेषताएँ ।
 - 3.3. - भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण ।
4. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न
5. पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
6. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
7. सारांश
8. स्वाध्याय
9. क्षेत्रीय कार्य
10. अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. भाषा की भारतीय एवं पाश्चात्य परिभाषाओं से अवगत हो सकेंगे।
2. भाषा के स्वरूप से परिचित हो जाएँगे।
3. मानवीय और मानवेतर भाषा के बीच के अंतर को समझ पाएँगे।
4. भाषा की विशेषताएँ स्पष्ट कर सकेंगे।
5. भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण जान पाएँगे ।

2. प्रस्तावना :

मनुष्य का जीवन भाषा के बिना अधूरा है। भाषा के अभाव में वह गूंगा है। इस विशाल धरती पर किसी भी भूभाग पर बसे मनुष्य को भाषा की जरूरत है। भिन्न-भिन्न भूप्रदेश में बसे इन लोगों की भाषा में नदी, पहाड़, रेगिस्तान, जंगल, आबोहवा आदि के कारण भिन्नता है। भिन्नता के कारण भाषाओं का अध्ययन करना जरूरी होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। जिस प्रकार वह अपने विचार दूसरों को सुनाना चाहता है, उसी प्रकार दूसरों के विचार सुनना भी चाहता है। आत्माभिव्यक्ति की यह इच्छा मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है। आत्माभिव्यक्ति की इस इच्छा (Desire of self expression) ने ही भाषा को जन्म दिया है। मनुष्य के विचारविनिमय के अनेक साधनों में 'भाषा' एक महत्वपूर्ण साधन है। इस भाषा के व्यापक एवं सीमित अर्थ कौनसे हैं? भाषा की कौनसी महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं? किन-किन विद्वानों ने भाषा को परिभाषाबद्ध करने की कोशिश की है? भाषा की सबसे व्यापक परिभाषा कौनसी है? साथ ही भाषा का स्वरूप, भाषा की विशेषताएँ और भाषा के परिवर्तनशीलता के कारण कौनसे हैं? आदि प्रश्नों के संदर्भ में हम प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करेंगे।

3. विषय-विवेचन

अब हम क्रमशः भाषा की परिभाषाएँ, विशेषताएँ एवं भाषा की परिवर्तनशीलता के कारणों का अध्ययन करेंगे।

3.1 भाषा की परिभाषाएँ-

भाषा की परिभाषाओं का अध्ययन करने से पहले हमें मनुष्य के विचार-विनिमय के विभिन्न साधन एवं भाषा के व्यापक तथा सीमित अर्थ से परिचित होना आवश्यक है। भाषा के दो अर्थ होते हैं एक व्यापक अर्थ और दूसरा सीमित अर्थ।

1) व्यापक अर्थ -

- ♦ भाषा के इस अर्थ में वे सभी साधन आ जाएंगे, जिनके द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है। इन साधनों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है स्पर्श ग्राह्य, नेत्रग्राह्य तथा श्रवणग्राह्य।

♦ स्पर्श ग्राह्य -

इसके अंतर्गत वे साधन आते हैं, जिनके द्वारा मनुष्य विचार-विनिमय करते समय स्पर्श का सहारा लेता है। जैसे पुलिस का खतरा होने पर एक चोर दूसरे का हाथ दबाकर, बिना बोले ही, उस खतरे का संदेश उसे देता है। इस प्रकार स्पर्श से ही वे आपस में विचार-विनिमय कर लेते हैं।

♦ नेत्र ग्राह्य -

इस वर्ग के अंतर्गत वे साधन आते हैं, जिनके द्वारा व्यक्त विचार-विनिमय करते समय मनुष्य संकेतों का सहारा लेता है। इन संकेतों के द्वारा एक मनुष्य दूसरे तक अपनी बात पहुंचा देता है। चूंकि इन संकेतों का ग्रहण नेत्र करते हैं, अतः इनको नेत्र ग्राह्य साधन कहा जाता है। स्काऊटों का परस्पर झंडियों के द्वारा विचार-विनिमय करना अथवा रेल्वे गार्ड का हरी-लाल झंडी हिलाकर गाड़ी के चलने व रुकने का संकेत देना, विचार-विनिमय के नेत्र-ग्राह्य साधन है।

♦ **श्रवण ग्राह्य-**

श्रवण ग्राह्य वर्ग के अंदर वे समस्त ध्वनियाँ आ जाती हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को व्यक्त करता है। चुटकी बजाकर किसी को बुलाना या डाक घर के तार बाबू का गर-गिट ध्वनि के द्वारा संदेश को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजना, विचार-विनिमय के श्रवण ग्राह्य साधन हैं।

2) सीमित अर्थ-

- ♦ उपर्युक्त सभी साधनों को भाषा मानने से उसके अर्थ में अतिव्याप्ति हो जाती है, जो भाषा के वैज्ञानिक अर्थ कि दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। वस्तुतः भाषा का अपना सीमित अर्थ है, जो उसको वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करता है।

भाषा के इस सीमित अर्थ में निहित कुछ प्रवृत्तियों का परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

- 1) भाषा विचार-विनिमय का साधन है।
- 2) भाषा उच्चारण अवयवों से निकले ध्वनि-प्रतीकों का समूह है।
- 3) भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों का समूह है।
- 4) भाषा के ध्वनि-प्रतीक विश्लेषण योग्य होते हैं।
- 5) इन ध्वनि-प्रतीकों का रूप यादृच्छिक होता है।
- 6) भाषा का प्रयोग समाज का एक वर्ग विशेष करता है।

इन प्रवृत्तियों के कारण भाषा के अर्थ में अतिव्याप्ति नहीं हो पाती।

भाषा के वैज्ञानिक अर्थ को स्पष्ट करने का प्रयास भारतीय तथा पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों ने किया है। उनकी परिभाषाओं के आधार पर भाषा का वैज्ञानिक स्वरूप स्पष्टतः सामने आता है।

भाषा की परिभाषाएँ: भारतीय-

- ♦ 'भाषा' शब्द संस्कृत के 'भाष' धातु से बना है। 'भाष' शब्द का अर्थ है 'बोलना' या 'कहना'। अर्थात् भाषा वह है, जिसे बोला जाए।
- ♦ प्रसिद्ध वैयाकरण पतंजलि ने अपने 'महाभाष्य' में भाषा के अर्थ को इस प्रकार स्पष्ट किया है -
- ♦ 'व्यक्ता वाचि वर्णा येषां त इये व्यक्त वाचः ।' अर्थात् जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है, उसे भाषा कहते हैं।

हिंदी के अनेक भाषा वैज्ञानिकों ने भी विविध रूप से भाषा को परिभाषित करने का प्रयास किया है -

1) पं. कामता प्रसाद गुरु -

“भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली-भाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।”

2) डॉ. देवेंद्रनाथ शर्मा –

“जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग करते हैं, उस यादृच्छिक रुढ़ ध्वनि-संकेत प्रणाली को भाषा कहते हैं।”

3) डॉ. मंगलदेव शास्त्री –

“भाषा मनुष्य की उस चेष्टा या व्यापार को कहते हैं, जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से उच्चारण किए गए वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।”

4) डॉ. श्यामसुंदर दास –

“मनुष्य और मनुष्यों के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्ति ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं।”

5) सुकुमार सेन –

“अर्थवान कण्ठ से निःसृत ध्वनि-समाष्टि ही भाषा है।”

6) पी. डी. गुण–

“ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा हृदयगत भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।”

7) डॉ. भोलानाथ तिवारी –

“भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित मूलतः प्रायः यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा किसी भाषा समाज के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।”

भाषा की परिभाषाएँ: पाश्चात्य –

1) प्लेटो –

‘सोफिस्ट’ में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए प्लेटो ने कहा है कि विचार और भाषा में थोड़ा ही अंतर है। “विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है, तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।”

2) स्वीट–

“ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।”

3) वेंड्रिए –

“भाषा एक प्रकार का चिह्न है। चिह्न से तात्पर्य उन प्रतीकों से हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों तक संप्रेषित करता है। ये प्रतीक भी कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, कर्णग्राह्य एवं स्पर्शग्राह्य। भाषा की दृष्टि से वास्तव में कर्णग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ हैं।”

4) कार्डिनर –

"The common definition of speech is the use of articulate sound symbols for the expression of thought."

अर्थात् विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यवहृत व्यक्त और स्पष्ट ध्वनि संकेतों को भाषा कहते हैं।

5) क्रोचे –

"Language is articulate, limited, organised sound employed in expression."

अर्थात् अभिव्यंजना के लिए प्रयुक्त स्पष्ट सीमित, सुसंगठित ध्वनि को भाषा कहते हैं।

6) ब्लॉक और ट्रेगर –

"A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a society group co-operates."

अर्थात् भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की एक व्यवस्था है, जिसमें एक सामाजिक समूह परस्पर सहयोग करता है।

7) स्त्रुत्वाँ –

"A Language is a system of arbitrary vocal symbols by mean of which members of a social group co-operate and interact."

अर्थात् भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिससे एक सामाजिक समूह परस्पर सहयोग और व्यवहार करता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं को देखने से यह स्पष्ट होता है कि भाषा के संदर्भ में कोई मत अपने में पूर्ण नहीं है। इन परिभाषाओं में भाषा का आधार ध्वनि-प्रतीक है। ध्वनि मुख्य अवयवों से उच्चरित होनी चाहिए। भाषा में एक व्यवस्था होती है। एक भाषा का क्षेत्र एक समाज विशेष ही होता है। भाषा का कार्य वक्ता के भाव या विचार को श्रोता तक पहुंचाना है, आदि बातों की ओर संकेत मिलता है।

संक्षेप में भाषा, उच्चारण अंगों से निःसृत विश्लेषण योग्य, सार्थक, यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से समाज के एक वर्ग विशेष के लोग परस्पर विचार-विनिमय करते हैं।

इस तरह भाषावैज्ञानिकों ने भाषा को परिभाषा बढ़ करने का प्रयास किया है। विवेचित सभी परिभाषाओं पर गौर करने पर कुछ बातें सामने आती हैं कि चंद शब्दों में भाषा को बाँधकर उसकी पूरी तस्वीर स्पष्ट करना भी मुश्किल होता है, आलोचना करने पर वे सर्वथा निर्दोष नहीं सिद्ध हो पाती। किसी में कोई त्रुटि दिखती है तो किसी में कोई अव्याप्ति, अतिव्याप्ति जैसे अनेक दोष हैं जिन पर परिभाषा बनाते समय ध्यान रखना होता है। अर्थात् सभी परिभाषाएँ सटीक नहीं हैं ऐसा नहीं है। कभी-कभी अनावश्यक शब्द प्रयोग से लाभ नहीं होता। भाषा का स्वरूप देखते समय भाषा के दोनों (स्थूल तथा सूक्ष्म) रूप देखे जाते हैं। अर्थात् भाषा अपने व्यापकतम रूप में (नेत्रग्राह्य, स्पर्शग्राह्य, श्रोतग्राह्य) वे साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा विचारों और भावों को व्यक्त करते हैं। मगर भाषाविज्ञान में हम जिस भाषा का अध्ययन करते हैं वह इतनी व्यापक नहीं है। भाषाविज्ञान में प्रधानतः वाचिक भाषा का ही अध्ययन होता है। उस भाषा के बारे में संक्षेप में कहा जा सकता है –

- 1) भाषा मनुष्यों के विचार-विनिमय का माध्यम है।
- 2) भाषा उच्चारण अवयवों से निःसृत ध्वनियों का समूह है।
- 3) उच्चरित ध्वनियाँ विश्लेषणीय होती हैं।
- 4) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-समूह सार्थक होते हैं।
- 5) ध्वनि समूह के अर्थ यादृच्छिक होते हैं।
- 6) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-प्रतीकों के समूह में एक व्यवस्था होती है।
- 7) भाषा का प्रयोग उसे समझनेवाले समाज में होता है।

3.2 भाषा की विशेषताएँ –

भाषा के अर्थ एवम् उसके स्वरूप को समझने के पश्चात् उसकी प्रवृत्तियों को समझना कठिन नहीं होगा। भाषा के सहज स्वभाव को प्रकृति कहते हैं और उसमें निहित स्वाभाविक गुणों को प्रवृत्तियाँ कहा जाता है। भाषा की प्रवृत्तियाँ निर्धारित करते समय यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि भाषा सदैव परिवर्तनशील है। उसका प्रवाह प्राकृतिक होता है।

भाषा की प्रमुख प्रवृत्तियाँ (विशेषताएँ) इस प्रकार हैं।

- 1) भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है।
- 2) भाषा अर्जित संपत्ति है।
- 3) भाषा आद्यन्त सामाजिक वस्तु है।
- 4) भाषा का अर्जन अनुकरण द्वारा होता है।
- 5) भाषा चिर परिवर्तनशील है।
- 6) भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता।
- 7) भाषा परंपरागत होती है।
- 8) भाषा का एक सामाजिक स्तर होता है।
- 9) प्रत्येक भाषा की ऐतिहासिक सीमा होती है।
- 10) प्रत्येक भाषा की भौगोलिक सीमा होती है।
- 11) भाषा कठिनता से सरलता की ओर अग्रसर होती है।
- 12) भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर और अप्रौढता से प्रौढता की ओर अग्रसर होती है।
- 13) भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है।
- 14) प्रत्येक भाषा की संरचना अलग-अलग होती है।

1) भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है-

कुछ विद्वानों के अनुसार पिता की भाषा पुत्र को मिलती है। जिस प्रकार पैतृक संपत्ति पुत्र को मिलती है, उसी प्रकार भाषा भी उसे धरोहर के रूप में मिल जाती है। किंतु यह मत सर्वथा मिथ्या है। यदि किसी भारतीय बच्चे को एक-दो वर्ष की अवस्था में इंग्लैंड आदि में रखा जाए, तो वह अंग्रेजी ही समझ या बोल सकेगा, वही उसकी मातृभाषा होगी। यदि भाषा पैतृक सम्पत्ति होती, तो वह कहीं पर भी भारतीय भाषा का ही प्रयोग करता। इसी संदर्भ में एक उदाहरण विद्वानों द्वारा दिया जाता है लखनऊ के एक अस्पताल में बारह वर्ष का बालक लाया गया था, जो कुछ भी बोल या समझ नहीं सकता था। खोज करने पर पता चला कि उस लड़के को छोटी अवस्था में भेड़िया उठा ले गया था। वह उसी प्रकार की ध्वनियाँ आदि करता था, जिस प्रकार भेड़िए करते हैं। अर्थात् भाषा पैतृक संपत्ति न होकर अर्जित संपत्ति है।

2) भाषा अर्जित संपत्ति है-

मनुष्य अपने चारों ओर के वातावरण से भाषा का अर्जन करता है। यह बात ऊपर के दोनों उदाहरणों से स्पष्ट हो जाती है। यदि भारतीय बालक को अंग्रेजी वातावरण में रखा गया, तो वह अंग्रेजी ही सीखेगा, न कि हिंदी या कोई अन्य भारतीय भाषा। इससे यह स्पष्ट होता है कि भाषा के अर्जन में वातावरण का प्रभाव पड़ता है। दूसरे उदाहरण से भी स्पष्ट होता है कि वातावरण से ही उसने विशेष ध्वनियों का अर्जन किया। इस प्रकार कहा जाता है कि भाषा अर्जित संपत्ति है, न कि पैतृक।

3) भाषा आदयंत सामाजिक वस्तु है -

भाषा की उत्पत्ति समाज से होती है, उसका विकास समाज में होता है, उसका अर्जन समाज से होता है और उसका प्रयोग भी समाज में ही होता है। इसलिए उसे आदयंत सामाजिक संपत्ति कहा जाता है। समाज से पृथक् किसी भाषा की कल्पना ही असंभव है। भाषा के लिए समाज की इस अनिवार्यता के कारण ही भाषा को सामाजिक व्यवहार कहा जाता है।

4) भाषा का अर्जन अनुकरण द्वारा होता है -

अरस्तू के अनुसार अनुकरण मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है। भाषा सीखने में भी मनुष्य उसी का उपयोग करता है। छोटा बालक अपने माता-पिता, गुरु और समाज से भाषा को सुनता है और उसे अनुकरण से अर्जित करता है। माँ दूध कहेगी तो बच्चा दूध कहेगा। इस प्रकार बचपन में माता-पिता आदि के द्वारा उच्चारित शब्दों का बच्चा अनुकरण करता है। कई बार अशुद्ध एवं अस्पष्ट उच्चारण करता है। धीरे-धीरे शुद्ध शब्दों को बोलने में समर्थ हो जाता है। यह सीखने की क्रिया बचपन से लेकर जीवन भर चलती रहती है। काल की संकल्पनाओं को भी वह अनुकरण से ही सीखता है।

5) भाषा चिर-परिवर्तनशील होती है-

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। यह संसार स्वतः परिवर्तनशील है। इस संसार की हर वस्तु परिवर्तन से प्रभावित होती है। यही कारण है कि मनुष्यों के द्वारा प्रयुक्त भाषा भी परिवर्तनशील है। उसका निरंतर विकास होता रहता है। एक भाषा का जो रूप आज देखने को मिलता है वह सौ वर्ष पहले नहीं था। और जो सौ वर्ष पहले था, वह उससे पहले नहीं था। जैसे वेद ग्रंथों में जिस संस्कृत भाषा का प्रयोग हुआ है, उसका उसी रूप

में वाल्मीकि, कालिदास जैसे संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वानों के ग्रंथों में प्रयोग नहीं हुआ है। ध्वनि, शब्द, व्याकरण, अर्थ इनमें कहीं न कहीं परिवर्तन होता ही रहता है, जैसे बिंदु से बूंद, मेघ से मेह, शाक से साग में ध्वनि परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है। इसी तरह प्रयोग में आने वाले शब्दों का प्रयोग एक दिन समाप्त होता है और नए शब्द उत्पन्न होकर प्रयोग में आने लगते हैं। जैसे सत्याग्रह और आंदोलन जैसे शब्द सन 1921 के बाद प्रयोग में आने लगे। कालांतर से अर्थ में भी परिवर्तन होने लगा, जैसे वैदिक भाषा में असुर शब्द का अर्थ 'देव' होता था, जो बाद में 'राक्षस' का वाचक बन गया। भाषा की परिवर्तनशीलता केवल समय तक सीमित नहीं है। स्थान के साथ-साथ उसका स्वरूप बदलता है। भाषा के इस परिवर्तन के कारण ही एक ही परिवार की भाषा सिंधी, हिंदी, गुजराती, मराठी, उडिया, बंगला आदि अनेक भाषाओं में बदल गई तथा प्रत्येक भाषा की कई बोलियां और उपबोलियां बन गई। भाषा की इस परिवर्तनशील प्रवृत्ति के दो मुख्य आधार हैं 1) शारीरिक और 2) मानसिक। भाषा के परिवर्तन में यही दोनों कार्य करते हैं।

6) भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता -

भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता। भाषा आवश्यकतानुसार सदा परिवर्तित होती रहती है। भाषा के संबंध में यह कभी नहीं कहा जा सकता कि यही भाषा का अंतिम स्वरूप है। कबीर ने कहा है, 'भाषा बहता नीर। इसी प्रवाह के कारण जहां भाषा अपने प्राचीन शब्दों को छोड़ती चलती है, वहीं नए शब्दों को ग्रहण भी करती जाती है। एक भाषा जब दूसरी भाषा के संपर्क में आती है, तब उसके प्रचलित शब्दों को ग्रहण कर लेती है। और ये शब्द उसके प्रयोग प्रवाह में अविच्छिन्न रूप से चलने लगते हैं। अपवाद रूप में संस्कृत ही एकमात्र ऐसी भाषा है, जिसे पाणिनि के व्याकरण ने इतना स्थिर कर दिया कि शताब्दियों की यात्रा में भी उसमें कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ है। संस्कृत को छोड़कर संसार की सभी भाषाएँ दिन-प्रतिदिन परिवर्तित होती हैं। जहां भाषा में स्थिरता आती है, वहां भाषा मृत बन जाती है। परिवर्तन और अस्थिरता ही भाषा के जीवन के द्योतक हैं।

7) भाषा परंपरागत होती है -

भाषा परंपरागत वस्तु है। भाषा परंपरा से मनुष्य को प्राप्त होती है और वह वंश परंपरा से अग्रसर होती हुई चली जाती है। संस्कृत भाषा सहस्रो वर्षों से परंपरा से चली आ रही है। इसी प्रकार भारत में मराठी, हिंदी, गुजराती, पंजाबी, बंगला परंपरा से चली आ रही हैं। समय के साथ भाषा बदलती रहती है। परंतु उसका प्रवाह खंडित नहीं होता। यदि भाषा का कोई जनक या जननी है, तो वह समाज और परंपरा है।

8) भाषा का एक सामाजिक स्तर होता है-

जिस प्रकार एक समाज में भाषा का प्रयोग करने वाले व्यक्तियों का सामाजिक स्तर अलग-अलग होता है, उसी प्रकार उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा का भी सामाजिक स्तर विभिन्न होता है। समाज में डॉक्टर, इंजीनियर, साहित्यकार, व्यापारी, वकील, मजदूर आदि विभिन्न वर्ग होते हैं और उनका मानसिक स्तर भी अलग-अलग होता है। उदाहरण के लिए यदि सभी हिंदी भाषा का ही प्रयोग करते हैं, तो एक भाषा का प्रयोग करते हुए भी उनके द्वारा प्रयुक्त हिंदी का स्तर अलग-अलग होगा।

9) प्रत्येक भाषा की ऐतिहासिक सीमा होती है -

प्रत्येक भाषा की ऐतिहासिक सीमा होती है। ऐतिहासिक भाषाविज्ञान प्रत्येक भाषा के इस ऐतिहासिक पक्ष को लेता है। प्रत्येक भाषा प्रारंभ में किस रूप में थी। बाद में बदलकर किस रूप में आई, वह किस समय से किस समय तक प्रचलित रही, इन बातों पर ऐतिहासिक भाषाविज्ञान में विचार होता है। इस दृष्टि से संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आर्य भाषाओं आदि का समय निर्धारित किया गया है।

10) प्रत्येक भाषा की भौगोलिक सीमा होती है -

भाषा के संबंध में एक कहावत है 'चार कोस पर पानी बदले आठ कोस पर बानी।' कहने का तात्पर्य यह है कि एक विशेष भूखंड की भाषा भी विशिष्ट होती है। तात्पर्य एक भूखंड विशेष में प्रयुक्त भाषा दूसरे भूखंड विशेष में प्रयुक्त भाषा से निश्चित रूप से अलग होती है। उदाहरण के लिए बंगला नामक भूखंड की भाषा यदि बंगाली है, तो पंजाब नामक भूखंड की भाषा पंजाबी है। इसी प्रकार अंग्रेजी, रूसी, चीनी की भी अपनी-अपनी निर्धारित भौगोलिक सीमाएं हैं।

11) भाषा कठिनता से सरलता की ओर अग्रसर होती है -

मनुष्य स्वभाव से ही सरलता प्रिय प्राणी है। वह हर क्षेत्र में श्रम और शक्ति की बचत करना चाहता है। अतः वह कम से कम श्रम में अधिक से अधिक कार्य करना चाहता है। मनुष्य की यह प्रवृत्ति भाषा के क्षेत्र में भी सक्रिय रहती है। जिस प्रकार जल की धारा ऊपर से नीचे की ओर जाती है, उसी प्रकार भाषा भी कठिनता से सरलता की ओर अग्रसर होती है। जनसाधारण में यह प्रवृत्ति स्पष्टतया परिलक्षित होती है। प्रयत्न लाघव, मुखसुख आदि कई कारणों से भाषा में कई परिवर्तन होते हैं। जैसे, सत्येंद्र को सतेंद्र, फिर सतेंदर, फिर सतिंदर और सतेज कहने लगते हैं। उपाध्याय का झा, मुखोपाध्याय का मुखर्जी आदि भी इसी के उदाहरण हैं।

12) भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होती है-

सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ-साथ भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर जाती है। अर्थात् भाषा में परिष्कार होता है। इसी परिष्कार के कारण भाषा शिथिलता के स्थान पर चुस्त बन जाती है। जिसके कारण अभिव्यक्ति में विस्तार के स्थान पर सूक्ष्मता आ जाती है और भाषा प्रौढ़ हो जाती है। प्रौढ़ता से यहाँ मतलब विचारों और अनुभूतियों को गहराई से व्यक्त करने की क्षमता से है। जैसे मैं जाता हूँ, पढ़ता हूँ के स्थान पर मैं जाकर पढ़ता-लिखता हूँ। प्रौढ़ता का उदाहरण है। प्राचीन हिंदी की तुलना में आज की हिंदी प्रौढ़ और सूक्ष्म है। द्विवेदी कालीन विवरणात्मक भाषा छायावाद-काल की भाषा की अपेक्षा अप्रौढ़ ही समझी जाएगी।

13) भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है-

भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है। संयोग का अर्थ है मिली हुई स्थिति और वियोग का मतलब है अलग-अलग होना। अब तो यह बात स्वीकार करनी पड़ती है कि भाषा संयोग से वियोग की ओर जाती है, जैसे रामः गच्छति से राम जाता है। कहा जा सकता है कि संस्कृत से हिंदी वियोगात्मक हो गई है।

14) प्रत्येक भाषा की संरचना अलग-अलग होती है -

प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना अलग होती है। अर्थात् प्रत्येक भाषा का ढाँचा पूर्णतया स्वतंत्र होता है। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ की दृष्टि से दो भाषाओं में इसी कारण अंतर आ जाता है। जैसे हिंदी में दो लिंग हैं, गुजराती में तीन, हिंदी में दो वचन हैं, तो संस्कृत में तीन। इस प्रकार प्रत्येक भाषा की संरचना दूसरी भाषा से अलग होती है।

3.3. भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण -

भाषा की परिवर्तनशीलता से तात्पर्य भाषा-विकास से है। लेकिन यहाँ इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि भाषा के विकास का आशय भाषा का अच्छी और अच्छी, या ऊँची होना नहीं है। बल्कि विकास का अर्थ केवल आगे बढ़ना या परिवर्तन है। परिवर्तन से भाषा अभिव्यंजनाशक्ति, माधुर्य तथा ओज आदि की दृष्टि से उठ भी सकती है और नीचे भी जा सकती है। हां, इतना जरूर कहा जा सकता है कि भाषा प्रायः कठिनता से सरलता की ओर जाती है। भाषा के विकास या परिवर्तन पर प्राचीन काल से विचार होता रहा है। इस दृष्टि से शब्दशास्त्र पर विचार करनेवाले प्राचीन भारतीय आचार्य कांत्यायन, पतंजलि, कैयट, जयादित्य तथा वामन आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यूरोप में इस विषयपर गंभीरता से और व्यवस्थित रूप से विचार करनेवाले प्रथम व्यक्ति डैनिस विद्वान जे. एच. ब्रेड्सडार्फ हैं। इनके अतिरिक्त पाल, येस्पर्सन, स्टुर्टवेंट आदि विद्वानों ने भाषाविकास (परिवर्तन) के कारणों को मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया है

(1) आंतरिक या अभ्यंतर और (2) बाहरी या बाह्य।

आंतरिक या अभ्यंतर कारण-

इन्हें 'भीतरी कारण' भी कहा जाता है। इस वर्ग के अंतर्गत भाषा की अपनी स्वाभाविक गति के साथ-साथ वे कारण भी सम्मिलित हैं, जो प्रयोक्ता की शारीरिक या मानसिक योग्यता आदि संबंधी स्थिति से संबंध रखते हैं। संक्षेप में, जो कारण भाषा की प्रकृति या स्वरूप से सम्बद्ध हैं, उन्हें अभ्यंतर कारण कहा जा सकता है। इस वर्ग के अंतर्गत आनेवाले कुछ प्रधान कारण इसप्रकार हैं-

1) प्रयत्न-लाघव-

भाषा में विकास या परिवर्तन उपस्थित करनेवाले कारणों में यह सबसे महत्वपूर्ण कारण है। इसे 'मुख-सुख' भी कहते हैं। कठिनता से सरलता की ओर जाना मानव की स्वाभाविक वृत्ति है। सरलता की यह प्रवृत्ति उसके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में देखी जा सकती है। जब भी उसे किसी स्थान की ओर जाना होता है, तब भी वह छोटा रस्ता (short cut) ढूँढ़ना चाहता है। यही प्रवृत्ति उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा में भी दिखाई देती है, जिसे 'प्रयत्न-लाघव' कहा जाता है। कम से कम प्रयत्न से लोग शब्दों को उच्चारित करना चाहते हैं और इस कम से कम प्रयास में भी सरलता के लिए कभी वे शब्दों को बड़ा और कभी छोटा बना डालते हैं, तो कभी कठिन संयुक्त व्यंजनों आदि को सरल कर देते हैं। कृष्ण का कन्हैया, कान्हा या किशन, भक्त का भगत, रेलवेस्टेशन का स्टेशन, धर्म का धरम, गृद्ध का गिद्ध आदि सरल करके बोलने के प्रयास के ही उदाहरण हैं। अंग्रेजी में know का 'उच्चारण 'नो', knife का उच्चारण 'नाइफ' तथा Talk का उच्चारण 'टॉक' भी इसी का परिणाम है। सरलता के लिए कुछ शब्द छोटे कर लिए जाते हैं; जैसे, उपाध्याय से 'ओझा' और फिर केवल 'झा', कबही से 'कभी', जबही से 'जभी', मास्टरसाहब से 'मास्साब', पंडित जी से 'पंडीजी', मार डालासे 'माड्डाला' आदि। कुछ शब्द

सरल बनाने के लिए बड़े कर लिए जाते हैं; जैसे, प्रसाद से 'परसाद', स्कूल से 'इस्कूल', स्नान से 'असनान', ग्रहण से 'गरहन' आदि। संक्षेप का प्रयोग भी प्रयत्न लाघव की दृष्टि से ही किया जाता है।

2) अधिकप्रयोग-

परिवर्तन का यह कारण भाषा में स्वाभाविक विकास ला देता है। अधिक प्रयोग के कारण धीरे-धीरे अन्य सभी चीजों की भांति भाषा में भी स्वाभाविक रूपसे परिवर्तन होता है। संस्कृत की कारकीय विभक्तियाँ इसीप्रकार धीरे-धीरे घिसते-घिसते समाप्त हो गई, जिसके फलस्वरूप हिंदी भाषा में परसर्गों की आवश्यकता पड़ी। 'राम' के स्थान पर 'रामने' या 'रामस्य' के स्थान पर 'रामका' जैसे नए रूप इसी के परिणाम हैं।

३) बलाघात -

भाषा के परिवर्तन का बलाघात भी एक मुख्य कारण है। बलाघात से तात्पर्य है, किसी व्यंजन, शब्द या शब्दांश पर बोलते समय अधिक बल देना। इसीप्रकार स्वर पर बल देने से स्वराघात होता है। इस स्वराघात और बलाघात से प्रायः स्वर या व्यंजन का पूर्ण वर्ण ही गायब हो जाता है। यह परिवर्तन ध्वनि और अर्थ दोनों में देखा जा सकता है। जैसे निम्ब का 'नीम', बिल्व का 'बेल', अभ्यंतर का 'भीतर' आदि। भाषा परिवर्तन का यह कारण भाषा परिवर्तनशीलता के कारण एवं भाषा के विविध रूप अन्य सभी भाषाओं में भी मिलता है। जैसे अंग्रेजी भाषा का शब्द 'History' ले सकते हैं। इस शब्द में 'S' वर्ण पर बलाघात होने से 't' के बाद आनेवाला स्वर 'O' निर्बल हो गया; फलस्वरूप इस शब्द का उच्चारण 'हिस्टोरी' न होकर 'हिस्ट्री' हो गया, जब कि 'Historian' शब्द में 'o' स्वर का उच्चारण स्पष्ट है। अंग्रेजी में कंडक्ट (Conduct) में यदि 'क' पर बलाघात होगा तो यह शब्द संज्ञा होगा, पर यदि 'S' पर होगा, तो क्रिया। mport, Present, nsult, ncrease आदि शब्द भी ऐसे ही हैं। ध्वनि की भांति अर्थ में भी वह बलाघात कार्य करता है। 'जुगुप्सा' शब्द का अर्थ परिवर्तन इसका अच्छा, उदाहरण है। यह शब्द 'गुप' धातु से बना है, जिसका आरम्भ का अर्थ था 'रक्षा करना' या 'पालन करना'। रक्षा या पालन छिपाकर भी किया जाता है। अतः इसमें छिपाने का भाव आने लगा और कुछ दिनों में यही भाव प्रधान हो गया। अधिकतर वही क्रिया या वस्तु छिपाई जाती है, जो घृणित होती है। अतएव 'घृणा' के लिए इसका प्रयोग चल पड़ा। आज भी जुगुप्सा का प्रयोग घृणा के लिए ही होता है। हिंदी का 'गोस्वामी' शब्द भी ऐसा ही है। इसीप्रकार 'राम ने श्याम को डंडे से मारा' यह सामान्य वाक्य है। परंतु यहाँ 'राम' पर बल देने का अर्थ होगा कि 'राम ने मारा, अन्य किसी ने नहीं।' 'श्यामको' शब्द पर बल देने का अर्थ होगा कि 'श्याम को मारा, अन्य किसी को नहीं।' 'डंडे' पर बल देने का अर्थ होगा कि 'डंडे से मारा, किसी और चीज से नहीं।' इसीप्रकार 'मारा' शब्द पर भी बल देने से अर्थ बदल जाएगा।

4) अनुकरण की अपूर्णता -

भाषा की विशेषताओं के अंतर्गत हम यह देख चुके हैं कि भाषा अर्जित सम्पत्ति है और मनुष्य उसका अर्जन अनुकरण के द्वारा समाज से करता है। लेकिन यह अनुकरण हर समय पूर्ण ही होता है ऐसा नहीं। कभी-कभी अनुकरणकर्ता अनुकरण करते समय या तो कुछ भाषिक तथ्यों को छोड़ देता है, या फिर कुछ को अपनी ओर से अनजाने ही जोड़ देता है। शारीरिक विभिन्नता, ध्यान की कमी तथा अशिक्षा एवं अज्ञान के कारण अनुकरण अपूर्ण रह जाता है। जैसे, श का स (देश का देस), ण का न (कर्ण से कान या गुण से गुन), क्ष का छ (क्षत्रीय से छत्री) आदि। कुछ विदेशी शब्द भी अज्ञान या अशिक्षा के कारण क्या से क्या हो गए हैं; जैसे, लाइब्रेरी

का 'रायबरेली', रिपोर्ट का 'रपट', लार्डसाहब का 'लाटसाहब', प्लाटून का 'पलटन', टाइम का 'टेम' आदि। अनुकरण की अपूर्णता क्रमशः एक पीढ़ीसे दूसरी पीढ़ी में बढ़ती जाती है। इसप्रकार कई पीढ़ियों के बाद भाषा में भी परिवर्तन दिखाई देने लगता है। जब हम पिछले आठ-दस पीढ़ियों के भाषा की तुलना करते हैं, तो दोनों के अंतर का पता स्पष्ट दिखाई देता है।

५) मानसिक योग्यता -

जिसप्रकार मनुष्यों के विभिन्न सामाजिक स्तर होते हैं, उसीप्रकार उनके विभिन्न मानसिक स्तर भी होते हैं। मनुष्यों के इस मानसिक स्तर की भिन्नता का प्रभाव उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दों पर भी होता है। बोलनेवालों के मानसिक स्तरमें परिवर्तन होने से विचारों में परिवर्तन होता है, विचारों में परिवर्तन होने से अभिव्यंजना के ढंग में परिवर्तन होता है और इसका प्रभाव भाषा पर भी पड़ता है। भाषा का यह परिवर्तन विशेष रूप से शब्दों के अर्थ में देखने को मिलता है, पर कभी-कभी ध्वनि पर भी इसका असर देखा गया है। 'टकर' नामक भाषा वैज्ञानिक ने शब्दों के संबंध में यह ठीक ही कहा है कि, शब्द एक प्रकार का सिक्का है जिसका मूल्य निश्चित नहीं है; सुननेवालों की मानसिक योग्यता के अनुसार उसका अर्थ घटता बढ़ता रहता है। जैसे 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ एक दार्शनिक के लिए तथा एक सामान्य मनुष्य के लिए अलग-अलग हो सकता है।

6) जानबूझकर परिवर्तन-

कभी-कभी भाषा के प्रयोगकर्ता भाषा में जानबूझकर भी परिवर्तन कर देते हैं। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से उस भाषा के लेखक आदि वर्ग में पाई जाती है। कभी वे शब्दों का नया प्रयोग करके उसे एक विलक्षण रूप देना चाहते हैं और कभी ज्ञान-प्रदर्शन की लालसा से भी शब्दों में परिवर्तन कर देते हैं। वस्तुतः यह परिवर्तन भाषा का स्वाभाविक परिवर्तन नहीं कहा जा सकता। हिंदी के प्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद ने 'अलेक्जेंडर' का 'अलक्षेंद्र' कर दिया है। कभी-कभी उपयुक्त शब्द न मिलने पर लोग जान-बूझकर किसी मिलते-जुलते शब्द का नए अर्थ में प्रयोग कर देते हैं। जैसे 'ट्रेजेडी' से 'त्रासदी' और 'कॉमेडी' से 'कामदी' आदिरूपों में भी नए-नए प्रयोग होते दिखाई देते हैं। जैसे, स्वीकारना, नकारना, बतियाना आदि क्रिया रूप इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं। अभिव्यक्ति में चमत्कार या नवीनता आदि लाने के लिए कलाकारों द्वारा निरंकुश प्रयोग भी भाषा में इसप्रकार के परिवर्तन ला देता है।

7) भावावेश या भावातिरेक -

मनुष्य विचारशील होने के साथ-साथ भावुक भी है। यही कारण है कि विशेष परिस्थिति में वह भावावेश में आ जाता है। भावावेश या भावातिरेक की यह स्थिति उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा पर भी प्रभाव डालती है और भाषा में परिवर्तन लाती है। प्रेम, क्रोध, शोक, घृणा, दुःख आदि भावों के अतिरेक (अधिकता) से शब्दों का रूप बदल जाता है। जैसे, बाबू का 'बबुआ', बच्चा का 'बचवा', बेटी का 'बिटिया' या 'बिट्टो', कृष्ण का 'किसनवा', देवर का 'देवरवा', ज्ञानेंद्र का 'ज्ञानू' आदि रूपांतर भावावेश या भावातिरेक के कारण ही हो जाते हैं।

8) जातीय मनोवृत्ति -

हर जाति की अपनी मनोवृत्ति होती है और भाषा उसके अनुसार परिवर्तित होती है। इसीकारण एक ही भाषा दो या अधिक जातियों में प्रचलित होकर दो या अधिक प्रकार से विकसित या परिवर्तित होती है। जिन जातियों में कोमलता और स्निग्धता होती है, उनकी भाषा मधुर होती है और जिन जातियों में दृढ़ता तथा सबलता होती है, उनकी भाषा कठोर होती है। जैसे, जर्मन जाति की कठोरता और सबलता का प्रमाण उनकी भाषा में प्रतिबिम्बित होता है, तो फ्रान्सीसियों की कोमलता और कलाप्रियता का प्रमाण फ्रान्सीसी भाषा में दिखाई देता है।

9) असावधानी -

मनुष्य के स्वभाव में असावधानी पाई जाती है। इस असावधानी के कारण भी कभी-कभी भाषा में परिवर्तन हो जाता है। जैसे, मतलब का मतबल, आमरूद का अरमूद, लखनऊ का नखलऊ, शाप का श्राप, चाकू का काबू, बंदूक का दंबूक, पुलिस का पुसिल, इच्छा का इक्षा आदि। प्रयोग-प्रवाह में आ जाने के कारण धीरे-धीरे यही विकृत शब्द भाषा में स्थान पाने लगते हैं।

10) सादृश्य -

जब मनुष्य किसी शब्द-प्रयोग को देखकर उसके मूल आधार का पता लगाए बिना उसी के समान कोई दूसरा शब्द गढ़ लेता है, तब यह सादृश्य के अंतर्गत आता है। यह सादृश्य प्रयोक्ता के अज्ञान का परिणाम होता है; अतः कुछ भाषावैज्ञानिक इसे 'मिथ्यासादृश्य' भी कहते हैं। कुछ लोग 'सृष्टि' के सादृश्य पर 'स्रष्टा' के स्थान पर 'सृष्टा' गढ़ लेते हैं। इसीप्रकार 'दृष्टा' शब्द का निर्माण भी 'दृष्टि' के सादृश्य पर हुआ है, जबकि सही शब्द है - 'द्रष्टा'। अंग्रेजी में शैल (shall), विल (will), में एल (I) रहने से शुड (should), वुड (would) में एल (I) का रहना तो हम समझ सकते हैं; पर कैन (can) से कुड (could) बनाते समय शुड और वुड के सादृश्य पर कुड में भी एल आ गया। इसीप्रकार 'पैतिस' के सादृश्य पर 'सैंतिस' में अनुनासिकता आ गई है। संस्कृत में 'द्वादश' के सादृश्य पर 'एकदश' भी 'एकादश' हो गया। 'देहात' से 'देहाती' के सादृश्य पर 'शहर' से 'शहराती' हो गया है। 'स्वर्ग' के सादृश्य पर 'नरक' भी 'नर्क' हो गया है। कबीर ने 'निर्गुण' के आधार पर 'सगुण' का 'सर्गुण' और 'पिंगला' के आधार पर 'इड़ा' का 'इंगला' कर दिया है।

बाहरी या बाह्य कारण -

बाहरी या बाह्य वर्ग के अंतर्गत वे कारण आते हैं, जो बाहर से भाषा को प्रभावित करते हैं। ये वातावरण सापेक्ष होते हैं। इस वर्ग के अंतर्गत आनेवाले प्रधान कारण इसप्रकार हैं-

1) व्यक्तिगत प्रभाव -

महान व्यक्तियों का भाषा के विकास पर प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी ऐसे युगपुरुष उत्पन्न होते हैं, जो अपने व्यक्तित्व से भाषा की गतिविधि को बहुत दूर तक प्रभावित कर देते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने उत्तरी भारत की भाषा, समाज एवं धर्म सभी को यथेष्ट प्रभावित किया था। परिणामस्वरूप उनके बाद की कविता की शैली भी उनसे प्रभावित हुई थी। इसीप्रकार गांधी जी के कारण हिंदी की हिंदी-उर्दू मिश्रित हिंदुस्तानी शैली को काफी बल मिला था। मराठी में लोकमान्य तिलक का व्यक्तित्व भी ऐसा ही था। जर्मनी में मार्टिन लूथर ने जर्मन भाषा को

एकबारगी कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया। इसतरह भाषा के विकास में महिमाशाली व्यक्तियों का प्रभाव अनुपेक्षणीय हो जाता है।

2) सामाजिक प्रभाव -

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा एक सामाजिक सम्पत्ति है। जहाँ मनुष्य का समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध है, वहीं उसकी भाषा भी समाज से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। जब किसी समाज के अंतर्गत दूसरे समाज के लोग आकर रहने लगते हैं, तब वे अपनी बोली तथा भाषा से धीरे-धीरे उस समाज की बोली एवं भाषा को प्रभावित करते हैं। अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषा-भाषियों का जब हिंदी भाषा समाज से सम्पर्क हुआ, तब उन भाषाओं के बहुत से शब्दों को हिंदी भाषा ने धारण किया। अरबी-फारसी के पांजामा, बाज़ार, दूकान, कागज, कलम, सन्दूक, किताब, तकिया, रजाई आदि और अंग्रेजी के कॉलर, टाई, पेंसिल, डिग्री, मोटर, रेल, स्टेशन आदि हजारों शब्द सामाजिक प्रभाव के कारण ही हिंदी भाषा में प्रयुक्त हो रहे हैं।

3) धार्मिक प्रभाव -

व्यक्तिगत और सामाजिक प्रभाव की तरह धर्म भी भाषा पर प्रभाव डालता है, जिससे भाषा में परिवर्तन होता है। जब एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के अनुयायियों के सम्पर्क में आते हैं, तब उनमें परस्पर एक-दूसरे के धार्मिक विचारों का आदान-प्रदान होता है, साथ ही एक-दूसरे के धार्मिक शब्दों का भी। इसप्रकार धार्मिक शब्दों को अपनाने से भी भाषा में परिवर्तन आ जाता है। वैदिक धर्म को माननेवाले आर्यों का सम्पर्क जब यूनानियों से हुआ, तो यूनान देश के लोगों ने वैदिक देवताओं के नाम ग्रहण किए। इन नामों का प्रयोग जब यूनानी भाषा में हुआ, तब इन शब्दों में काफी परिवर्तन हुआ; जैसे, 'देव' का 'थेओस', 'असुरमेघस' का 'अहुरमज्द' आदि। 'असुर' का 'अहुर', 'सोम' का 'होम', 'सिन्धु' का 'हिंदू' आदि भी इसी प्रकार के उदाहरण हैं। हिंदी भाषा भी जब इस्लाम और इसाई धर्म के प्रचारकों के सम्पर्क में आई, तब अरबी, फारसी, पुर्तगाली, फ्रेंच, अंग्रेजी आदि भाषाओं के धार्मिक शब्दों को उसने ग्रहण किया; जैसे, 'अल्लाह', 'मस्जिद', 'गिरजा' आदि। इसप्रकार धार्मिक प्रभाव से भी भाषा में परिवर्तन हुआ करता है।

4) राजनीतिक प्रभाव -

भाषा को राजनीति भी अत्यधिक प्रभावित करती है। प्रायः दुनिया के इतिहास में यह देखा गया है कि जब आक्रमणकारी किसी स्थान विशेष पर आक्रमण करते हैं, तो उस स्थान विशेष की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करने के साथ-साथ उस स्थान की भाषा को भी प्रभावित करते हैं। आक्रमणकारियों की भाषा से उस स्थान की भाषा प्रभावित होकर परिवर्तित होती है। लेकिन शब्दों का यह आदान-प्रदान एकांकी नहीं होता; दोनों भाषाएँ एक-दूसरे से प्रभावित होती हैं। जैसे, भारत में संस्कृत भाषा के प्रचार और प्रसार के समय हूण आदि जातियों का भारत में आगमन हुआ और यहां की राजसत्ता इनके हाथों में आई, तब संस्कृत के शब्दों में परिवर्तन होने लगा; जैसे, 'धर्म' का 'धम्म', 'कर्म' का 'कम्म', 'हस्ति' का 'हस्थि' आदि। इसी प्रकार आगे जब मुसलमान आक्रमणकारियों के हाथों में राजसत्ता आई, तब उनके कारण भी हिंदी भाषा में परिवर्तन हुआ और तुर्की, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के ढेर सारे शब्दों को हिंदी भाषा ने ग्रहण किया। कैची, कुली, गलीचा, चाकू, तोप, दारोगा, बहादुर, सौगात आदि तुर्की के; हवा, हुनर, अजब, किताब, तावीज आदि अरबी के; इनाम, ईमान, फुर्सत, कदम, मैदान आदि फारसी के अनेक शब्द हिंदी में राजनीतिक प्रभाव से ही आए हैं। इसीप्रकार बाद में

अंग्रेजी लोगों के सम्पर्क से डॉक्टर, इंजीनीयर, ऑफिस, स्कूल, स्प्रिंग, एजेंट, कमीशन, कॉलिज, पेन आदि अंग्रेजी शब्दों का हिंदी भाषा में प्रयोग राजनीतिक प्रभाव के कारण ही है।

5) सांस्कृतिक प्रभाव -

संस्कृति समाज का प्राण है, अतः उसका भी प्रभाव भाषा पर पड़ता है, और उसके कारण भाषा में परिवर्तन होता है। जब-जब समाज में सांस्कृतिक आंदोलन होते हैं, भाषा स्वतः विकास के पथपर आगे बढ़ती है। भारत में जैनमत, बौद्धमत, आर्यसमाज आदि के अविर्भाव के साथ-साथ भाषा क्षेत्र में भी आंदोलन हुए हैं। भारत में स्वदेशी भाषा का आग्रह स्वाधीनता संग्राम से प्रेरित सांस्कृतिक जागरण का अन्यतम परिणाम है। स्वदेशी आंदोलन ने प्रत्येक स्वदेशी वस्तु के प्रति लोगों के मन में प्रेम-भाव जगाया। इस सांस्कृतिक जागरण के कारण भाषा के स्वरूप में बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। हिंदी का शब्द भंडार संस्कृत बहुल हो गया। स्वाधीनता संग्राम के फलस्वरूप 'सत्याग्रह', 'असहयोग आंदोलन' आदि शब्द भाषा में प्रयुक्त होने लगे। धर्म-प्रसार आदि के कारण भी कभी-कभी दो विभिन्न संस्कृतियों का सम्मिलन होता है, जिसका भाषा के विकास या परिवर्तन पर प्रभाव पड़ता है। हिंदी में अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषा के शब्दों की बहुलता का यह भी एक प्रमुख कारण है।

6) भौगोलिक प्रभाव -

भाषा के परिवर्तन में भौगोलिक प्रभाव भी महत्वपूर्ण माना जाता है। जलवायु का प्रभाव मनुष्य के शारीरिक गठन पर ही नहीं, उसके चरित्र और ध्वनि पद्धति पर भी पड़ता है। प्रत्येक देश की अपनी एक विशिष्ट भौगोलिक स्थिति होती है। किसी स्थान की जलवायु उष्ण होती है, किसी स्थान की शीतल, तो किसी स्थान की शीतोष्ण। जलवायु की इस विभिन्नता का प्रभाव उस स्थान के लोगों की भाषाओं पर भी होता है। जिस प्रदेश की जलवायु उष्ण होती है, वहां के लोगों का वाग्यंत्र अधिक खुला होता है, अतः उनके द्वारा उच्चरित ध्वनियां स्पष्ट एवं मुखर होती हैं। इसके विपरीत जिन प्रदेशों की जलवायु शीत प्रधान होती है, वहाँ के निवासियों का वाग्यंत्र अधिक खुल नहीं पाता, इसीकारण उनके उच्चारण में अधिक स्पष्टता नहीं होती। जैसे, इंग्लैण्ड आदि प्रदेशों में शीतप्रधान जलवायु के कारण लोग उच्चारण ठीक से नहीं कर पाते और 'तोताराम' को 'टोटाराम', 'तुम्हारा' को 'टुमारा' आदि कह देते हैं।

7) वैज्ञानिक प्रभाव -

वर्तमान युग विज्ञान का युग है। विज्ञान ने मानव जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। विज्ञान के प्रभाव से भाषा में भी परिवर्तन हुए हैं। अतः भाषासंबंधी परिवर्तन के कारणों पर विचार करते समय विज्ञान की उपेक्षा करना उचित नहीं होगा। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं ने पिछली दो शताब्दियों में अकल्पनीय प्रगति की है, जिसके कारण असंख्य नई वस्तुओं का अविष्कार हुआ है। इन नई वस्तुओं के नामकरण की आवश्यकता से हजारों नए शब्द गढ़ने पड़े हैं, जिनसे भाषा अत्यधिक समृद्ध हुई है। सामान्य रूप से जितने शब्द शताब्दियों में नहीं बन पाते, उतने वर्षों में बन गए हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि, प्रत्येक प्रभाव की मात्रा सदा एक ही नहीं होती; कभी वह लक्षित होती है और कभी अलक्षितभाव से भाषा को प्रभावित करती है किंतु वह भाषा को अवश्य प्रभावित करती है और कभी-कभी तत्काल परिवर्तन दिखाई नहीं देता किंतु समय के साथ वह भाषा परिवर्तित दिखाई देता है। इसप्रकार भाषा परिवर्तन के आंतरिक और बाह्य मुख्य प्रयोजक कारण हैं। जिनसे भाषा परिवर्तन हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

4. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

अ) निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पर्यायों में से उचित पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

- 1) भाषा शब्द के 'भाष' धातु से बना है।
(क) संस्कृत (ख) पालि
(ग) प्राकृत (घ) अपभ्रंश
- 2) 'जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है, उसे भाषा कहते हैं' ने कहा है।
(क) पाणिनि (ख) पतंजलि
(ग) भामह (घ) दण्डी
- 3) ने 'सोफिस्ट' में विचार और भाषा के संबंध में लिखा है।
(क) होरेस (ख) अरस्तू
(ग) प्लेटो (घ) हर्डर
- 4) भाषा..... सम्पत्ति नहीं है।
(क) अर्जित (ख) पैतृक
(ग) चल (घ) अचल
- 5) भाषा सम्पत्ति है।
(क) अर्जित (ख) पैतृक
(ग) चल (घ) अचल
- 6) भाषा का कोई स्वरूप नहीं होता ।
(क) स्थायी (ख) अस्थायी
(ग) अंतिम (घ) चिरंतन
- 7) भाषा से सीखी जाती है।
(क) पढ़ने (ख) बोलने
(ग) अनुकरण (घ) लिखने
- 8) भाषा की परिवर्तनशीलता से तात्पर्य है है।
(क) भाषा सुधार (ख) भाषा विकास
(ग) भाषा की अच्छाई (घ) भाषा की ऊंचाई

- 9) भाषा कठिनता से की ओर जाती है।
 (क) अच्छाई (ख) ऊंचाई
 (ग) सरलता (घ) सूक्ष्मता
- 10) यूरोप में भाषा के विकास पर विचार करने वाले प्रथम व्यक्ति हैं।
 (क) पाल (ख) येस्पर्सन
 (ग) स्टुटवेट (घ) जे. एच. ब्रेड्सडार्फ
- 11) विद्वानों ने भाषा-विकास के कारणों को वर्गों में विभाजित किया है।
 (क) 2 (ख) 4
 (ग) 6 (घ) 8
- 12) संक्षेप का प्रयोग की दृष्टि से किया जाता है।
 (क) बलाघात (ख) प्रयत्न-लाघव
 (ग) सादृश्य (घ) भावावेश
- 13) 'उपाध्याय' शब्द का 'ओझा' और फिर केवल 'झा' हो जाना..... का उदाहरण है।
 (क) मानसिक योग्यता (ख) मुख-सुख
 (ग) अनुकरण की अपूर्णता (घ) जानबूझकर परिवर्तन
- 14) कारण से संस्कृत की कारकीय विभक्तियाँ धीरे-धीरे घिसते-घिसते समाप्त हो गई।
 (क) बलाघात (ख) मुख-सुख
 (ग) असावधानी (घ) अधिक प्रयोग
- 15) बलाघात के कारण 'अभ्यन्तर' शब्द रूप में परिवर्तित हो गया।
 (क) अभ्यान्तर (ख) आभांतर
 (ग) भीतर (घ) अन्तर्गत
- 16) देश का देस, कर्ण का कान, क्षत्रीय या छत्री, रिपोर्ट का रपट के उदाहरण हैं।
 (क) बलाघात (ख) मुख-सुख
 (ग) सादृश्य (घ) अनुकरण की अपूर्णता
- 17) अलेक्जेंडर का 'अलक्षेंद्र' करने वाले कवि हैं।
 (क) दिनकर (ख) निराला
 (ग) पंत (घ) प्रसाद

18) अंग्रेजी ट्रेजेडी का 'त्रासदी' में परिवर्तन का उदाहरण है।

(क) सादृश्य

(ख) असावधानी

(ग) अनुकरण की अपूर्णता

(घ) जानबूझकर परिवर्तन

5. पारिभाषिक शब्द-शब्दार्थ -

- ♦ आत्माभिव्यक्ति- अपने विचार/भाव प्रकट करना
- ♦ विचार-विनिमय-विचारों का आदान-प्रदान
- ♦ संप्रेषण- संदेश पहुँचाना
- ♦ सार्थक- जिसका अर्थ हो
- ♦ यादृच्छिक- मनमाना
- ♦ स्पर्श-ग्राह्य- छूकर समझने योग्य
- ♦ नेत्र-ग्राह्य- देखकर समझने योग्य
- ♦ श्रवण-ग्राह्य- सुनकर समझने योग्य
- ♦ पैतृक संपत्ति-जन्म से मिलने वाली चीज
- ♦ अर्जित संपत्ति-सीखी हुई चीज
- ♦ अनुकरण- नकल करना
- ♦ परंपरागत- पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाला
- ♦ परिवर्तनशील- जो बदलता रहता है
- ♦ प्रयत्न-लाघव- कम मेहनत में काम करना
- ♦ मुख-सुख - बोलने में आसानी
- ♦ बलाघात- शब्द पर जोर
- ♦ सादृश्य - समानता के आधार पर परिवर्तन
- ♦ अनुकरण की अपूर्णता - गलत नकल
- ♦ स्थूलता - मोटा/अस्पष्ट रूप
- ♦ सूक्ष्मता - बारीक/सटीक रूप
- ♦ अप्रौढ़ता -अपरिपक्व अवस्था
- ♦ प्रौढ़ता - परिपक्व अवस्था
- ♦ संयोगावस्था - जुड़े हुए शब्द
- ♦ वियोगावस्था - अलग-अलग शब्द
- ♦ संरचना - भाषा का ढाँचा
- ♦ विभक्ति - कारक के रूप (जैसे ने, को, से)

- ♦ भौगोलिक सीमा - क्षेत्र की सीमा
- ♦ ऐतिहासिक सीमा - समय की सीमा
- ♦ सामाजिक स्तर - समाज के वर्ग के अनुसार स्तर

6. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर -

- | | | | |
|---------------|-------------------------|------------------------|--------------------|
| 1 - संस्कृत, | 2 - पतंजलि, | 3 - प्लेटो, | 4 - पैतृक |
| 5 - अर्जित, | 6 - अंतिम, | 7 - अनुकरण, | 8 - भाषाविकास, |
| 9 - सरलता, | 10 - जे.एच.ब्रेड्सडार्फ | 11 - २ | 12 - प्रयत्न-लाघव, |
| 13 - मुख-सुख, | 14 - अधिक-प्रयोग, | 15 - भीतर, | 16 - अनुकरण की |
| अपूर्णता, | 17 - प्रसाद, | 18 - जानबूझकर परिवर्तन | |

7. सारांश -

- 1) मनुष्य के विचार-विनिमय के तीन प्रमुख साधन हैं - स्पर्शग्राह्य, नेत्रग्राह्य और श्रवणग्राह्य इनमें से मनुष्य की भाषा का संबंध श्रवण ग्राह्य साधनों से है।
- 2) भाषा मनुष्य के विचार-विनिमय का प्रमुख साधन है। उच्चारण अवयवों से निकले यादृच्छिक एवं सार्थक ध्वनि प्रतिकों के समूह को भाषा कहा जाता है।
- 3) भाषा को परिभाषाबद्ध करने की कोशिश अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने की है। लेकिन इनमें से कोई भी मत अपने में पूर्ण नहीं है। केवल डॉ. भोलानाथ तिवारी की परिभाषा अधिक व्यापक है।
- 4) भाषा पैतृक सम्पत्ति न होकर अर्जित सम्पत्ति है; भाषा अनुकरण के माध्यम से सीखी जाती है। यह आद्यन्त सामाजिक होने के साथ-साथ चिर-परिवर्तनशील भी है, उसका एक सामाजिक स्तर होता है। भाषा परम्परागत होती है और प्रत्येक भाषा की अपनी ऐतिहासिक एवं भौगोलिक सीमा होती है; प्रत्येक भाषा की संरचना अलग होती है तथा वह स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर, कठिनता से सरलता की ओर एवं संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है आदि भाषा की प्रमुख विशेषताएं हैं।
- 5) भाषा की उत्पत्ति का अध्ययन करने के दो मार्ग हैं - प्रत्यक्ष मार्ग और परोक्ष मार्ग। प्रत्यक्ष मार्ग के अंतर्गत भाषा-उत्पत्ति के संबंध में वर्णित विभिन्न वाद या सिद्धांत आते हैं, तो परोक्ष मार्ग के अंतर्गत बच्चों की भाषा, असभ्य जातियों की भाषा और आधुनिक भाषाओं का इतिहास इनका समावेश होता है।
- 6) भाषा चिरपरिवर्तनशील होती है। भाषा में परिवर्तन होना ही भाषा का विकास है। भाषा के परिवर्तन पर विचार करने वाले भारतीय आचार्य कात्यायन, पतंजलि, कैयट, जयादित्य, वामन आदि हैं। यूरोप में इस विषय पर विचार करने वाले प्रथम व्यक्ति डैनिश विद्वान जे. एच. ब्रेड्सडार्फ हैं। इसके अतिरिक्त पाल, येस्पर्सन, स्टुर्टवंट आदि ने भी इस विषय पर विस्तार से विचार किया है।
- 7) विद्वानों ने भाषा-परिवर्तन (विकास) के कारणों को मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया है अभ्यंतर या आंतरिक और बाहरी या बाह्य।

8 स्वाध्याय -

अ) दीर्घोत्तरी प्रश्न

- 1) भाषा की परिभाषा देकर भाषा की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
- 2) भाषा की विशेषताओं को विशद कीजिए।
- 3) भाषा की परिवर्तनशीलता के आंतरिक और बाह्य कारणों को स्पष्ट कीजिए।

9. क्षेत्रीय कार्य -

- 1) भारतीय एवं पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों के नामों की सूची तैयार कीजिए।
- 2) भाषा अनुकरण से सीखी जाती है, इस विशेषता के अनुसार बच्चों की भाषा का निरीक्षण कीजिए।
- 3) पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों के मूल सिद्धांतों को जानने के लिए उनकी मौलिक रचनाओं को देखिए।
- 4) भाषा-परिवर्तन के कारण परिवर्तित हुए पचास शब्दों का संग्रह कीजिए।
- 5) आपकी मातृभाषा में भाषा-परिवर्तन के कारण विकसित शब्दों को ढूंढिए।

10. अतिरिक्त अध्ययन के लिए-

1. तिवारी, भोलानाथ, (2020) भाषाविज्ञान (10 वां संस्करण) किताब महल प्रकाशन, दिल्ली।
2. शर्मा, देवेन्द्रनाथ, (2003). भाषाविज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।
3. द्विवेदी, क.दे. (1995), भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, दिल्ली।
4. सक्सेना, द्वारिकाप्रसाद. (2005), भाषाविज्ञान के सिद्धांत और हिंदी भाषा, नागरी प्रचारिणी सभा ।
5. सिंह, क (2007) भाषाविज्ञान, वाणी प्रकाशन, दिल्ली ।



इकाई क्र. 2

हिंदी भाषा का उद्भव और विकास, लिपि विकास का सामान्य परिचय, देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता

अनुक्रमणिका

1. उद्देश ।
2. प्रस्तावना ।
3. विषय विवेचन ।
 3. 1 हिंदी भाषा का उद्भव और विकास ।
 3. 2 लिपि विकास का सामान्य परिचय ।
 3. 3 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता ।
4. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न
5. पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
6. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
7. सारांश ।
8. स्वाध्याय ।
9. क्षेत्रीय कार्य ।
10. अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1 उद्देश :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. हिंदी भाषा के उद्भव और विकास को जान सकेंगे ।
2. हिंदी भाषा की विकास परंपरा से परिचित हो जायेंगे ।
3. हिंदी भाषा की उपयुक्तता से परिचित हो जायेंगे ।
4. लिपि का विकास तथा देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को समझ सकेंगे ।

2 प्रस्तावना :

हिंदी भाषा का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। इस विस्तृत क्षेत्र में भाषा का एक रूप मिलना असंभव है। हिंदी शब्द कई अर्थों से प्रयुक्त होता था; व्यापक, सामान्य भाषा परक और विशेष भाषा परक। 19 वीं शताब्दी में 'हिंदी' शब्द का प्रयोग विशेष भाषा परक अर्थ में होने लगा। उत्तर प्रदेश में, दिल्ली के आस-पास बोली जानेवाली जो भाषा थी उसे हिंदी कहा जाने लगा। आज हिंदी विश्व पटल पर छा गई है। विश्व की अन्य भाषाओं के शब्दों को अपनाकर दिन-ब-दिन वह संपन्न होती जा रही है और उसका शब्द भंडार बढ़ता जा रहा है। भाषा विशेष के रूप में हिंदी का अध्ययन करते हुए कुछ सवाल खड़े होते हैं कि हिंदी भाषा का उद्भव कब हुआ? इसका विकास कैसे होता रहा? आज उसके कितने रूप हैं? हिंदी शब्द समूह कैसा है? वैश्विक स्तर पर उसकी स्थिति कैसी है? तथा

लिपि का विकास और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता का अध्ययन करेंगे।

3 विषय विवेचन :

3.1 हिंदी भाषा का उद्भव और विकास :

वैदिक संस्कृत काल में आर्य भाषा प्रदेश में मुख्य रूप से तीन स्थानीय बोलियों का प्रचलन था। 1) पश्चिमोत्तरी 2) मध्यवर्ती 3) पूर्वी। किंतु पाली काल में दक्षिणी नामक बोली का विकास हो गया। अतः कुल स्थानीय बोलियों की संख्या चार हो गई थी। प्राकृत काल में इनकी संख्या सात तक पहुँची—ब्राह्म, केकेय, टक्क, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी तथा मागधी। इन्हीं से ही अपभ्रंश काल में छः सात बोलियों का विकास हुआ। जिन्हें प्राकृतों के नामों से पुकारा जाता है। इन्हीं अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ उद्भूत हुईं। अपभ्रंश भाषाओं का काल 500 ई. से 1000 ई. तक माना जाता है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में ब्राह्म से सिंधी, केकेय से लहँदा टक्क से पंजाबी; महाराष्ट्री से मराठी, शौरसेनी से गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिंदी, पहाड़ी; अर्धमागधी से पूर्वी हिंदी मागधी से बिहारी, बंगला, असमी, उडिया आदि भाषाओं का विकास हुआ है।

इस तरह आज जिसे हम हिंदी कहते हैं वह शौरसेनी अपभ्रंश का विकसित रूप है। जो पाँच उपभाषाओं अथवा बोली समूहों (पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी, पहाड़ी, बिहारी) का सामूहिक नाम है। वर्तमान हिंदी पश्चिमी हिंदी की खड़ी बोली का विकसित रूप है अर्थात् परिनिष्ठित रूप है। यह आज सर्वाधिक प्रचलित एवं राष्ट्रभाषा के गौरव को प्राप्त है। किसी भी भाषा के जन्म से ही वह साहित्य में नहीं आ सकती। उसमें प्रौढ़ता आने पर ही वह धीरे-धीरे साहित्य में प्रवेश करती है। इसी के आधार पर हिंदी भाषा का विकास देखा जा सकता है। उसके विकास अथवा इतिहास के 1000 वर्षों को तीन कालों में विभाजित करके देखा जा सकता है।

- 1) प्राचीन काल/प्रारंभिक काल/आदि काल (1000 ई. से 1500 ई. तक)
- 2) मध्यकाल (1500 ई. से 1800 ई. तक)
- 3) आधुनिक काल (1800 ई. से अब तक)

उपर्युक्त तीन कालों में वैज्ञानिक दृष्टि से हिंदी का अध्ययन करना आवश्यक है। तभी उसके विकास या इतिहास का क्रमबद्ध अध्ययन होगा। जिसके लिए उसका ध्वनि, व्याकरण, शब्दसमूह तथा साहित्य आदि दृष्टि से अध्ययन आवश्यक है।

1) प्राचीन काल/प्रारंभिक काल/आदिकाल (1000 ई. से 1500 ई. तक)

इस काल में अपभ्रंश और हिंदी साथ-साथ चल रही थी। इस हिंदी की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार -

ध्वनि : (आदिकालीन हिंदी में प्रयुक्त ध्वनियाँ अपभ्रंश की ही थीं।)

- 1) आदिकालीन हिंदी में अपभ्रंश के मूल आठ स्वर थे। (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए और ओ किंतु आदिकाल में नए दो स्वर विकसित हुए 'ऐ' और 'औ' जो संयुक्त थे।
- 2) संस्कृत, प्राकृत, पालि के च, छ, ज, झ अपभ्रंश में स्पर्श व्यंजन थे किंतु अदिकाल में वे स्पर्श संघर्षी हो गए।
- 3) संस्कृत, प्राकृत पालि के न, ल, स दन्त्य ध्वनियाँ आदिकालीन हिंदी में वर्त्य हो गई।
- 4) अपभ्रंश में ड, द व्यंजन नहीं थे। जिनका विकास आदिकालीन हिंदी में हुआ।
- 5) न्ह, म्ह, ल्ह आदि संयुक्त व्यंजन हिंदी में न, म, ल महाप्राण मूल व्यंजन हो गए।
- 6) आदिकालीन हिंदी में संस्कृत और फारसी से कुछ नए व्यंजन आ गए जो अपभ्रंश में नहीं थे।

♦ व्याकरण :

आदिकालीन हिंदी का व्याकरण 1100 ई. तक अपभ्रंश के काफी निकट था, अर्थात् काफी रूप अपभ्रंश के थे किंतु बाद में धीरे-धीरे अपभ्रंश के रूप कम होकर हिंदी के अपने व्याकरणिक रूप विकसित होने लगे थे। हिंदी का व्याकरण और अपभ्रंश का व्याकरण दोनों में निम्न अंतर था -

- i) अपभ्रंश संयोगात्मक भाषा थी तो आदिकालीन हिंदी में वियोगात्मक रूपों का प्राधान्य बढ़ने लगा था।
- ii) अपभ्रंश की तरह हिंदी में नपुंसक लिंग नहीं था।
- iii) अपभ्रंश की अपेक्षा आदिकालीन हिंदी की वाक्य रचना में शब्द क्रम निश्चित होने लगा था।

♦ शब्द समूह :

आदिकालीन हिंदी में अधिकांश शब्द अपभ्रंश के ही थे। भक्ति आंदोलन की वजह से तत्सम शब्द हिंदी में बढ़ने लगे थे। इसके साथ ही मुसलमानों के आगमन से पश्तो, फारसी, अरबी और तुर्की के शब्दों की संख्या बढ़कर अपभ्रंश के अनावश्यक शब्दों का प्रयोग न के बराबर हो गया था।

♦ साहित्य :

आदिकालीन हिंदी में गोरखनाथ, विद्यापति, नरपति नाल्ह, चन्दबरदाई, ख्वाजा बंदानेवाज तथा शाह मीराजी आदि साहित्यकार ख्याति प्राप्त कर चुके थे। इस काल के साहित्य में डिंगल, मैथिली, दक्खिनी अवधी तथा ब्रज मिश्रित भाषा का प्रयोग मिलता है।

2) मध्यकाल (1500 ई. से 1800 ई. तक)

इस युग के आरंभ में भक्तिधारा का प्राबल्य रहा। इसी कारण आदिकालीन हिंदी की अपेक्षा मध्यकालीन हिंदी काफी परिवर्तित हो चुकी थी, वह परिवर्तन निम्नानुसार है-

♦ **ध्वनि :**

- i) फारसी भाषा में शिक्षा की व्यवस्था और दरबार में फारसी के प्रभाव के कारण उच्चवर्गीय लोगों की हिंदी में क़, ख़, ग़, ज़, फ़ ये नए अल्प व्यंजन आ गए थे।
- ii) शब्द के अंत का 'अ' मूल व्यंजन के कारण लुप्त हो गया था। 'राम' का उच्चारण 'राम' होने लगा। कहीं कहीं अक्षरान्त 'अ' का भी लोप हुआ जैसे अदिकालीन 'जपता' का उच्चारण 'जप्ता' हो गया।

♦ **व्याकरण :**

ध्वनि की तरह मध्यकालीन हिंदी के व्याकरण में भी परिवर्तन दिखाई देता है।

- i) मध्यकालीन हिंदी भाषा में अपभ्रंश के आवश्यक रूप ही बचे थे। आदिकालीन की अपेक्षा मध्यकाल में हिंदी भाषा का व्याकरण अपने पैरों पर खड़ा था।
- ii) आदिकालीन संयोगात्मक हिंदी की तुलना में मध्यकालीन हिंदी पूर्ण रूप से वियोगात्मक बन गई थी।
- iii) उच्च वर्ग में फारसी भाषा का प्रचार होने के कारण हिंदी वाक्य रचना फारसी वाक्य रचना से प्रभावित होने लगी थी।

♦ **शब्दसमूह :**

शब्द-समूह की दृष्टि से देखा तो मध्यकालीन हिंदी में विदेशी भाषा के अधिकांश शब्द समाविष्ट हो गए थे। जो इस प्रकार हैं-

- i) फारसी से लगभग 3500, अरबी से 2500, पश्तो से 50, तुर्की से 125 तक शब्द मध्यकालीन हिंदी में आए थे, इस तरह कुल आगत शब्दों की संख्या लगभग 6000 से अधिक हो गई थी।
- ii) भक्ति आंदोलन की चरम सीमा के कारण तत्सम शब्दों का अनुपात बढ़ गया था।
- iii) मध्यकाल में यूरोप से सम्पर्क बढ़ने की वजह से पुर्तगाली, स्पेनीस, फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी भाषा के शब्द इस काल के परवर्ती चरण में हिंदी में आ गए थे।

♦ **साहित्य :**

मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के फलस्वरूप ब्रज और अवधी भाषा में प्रचुर साहित्य लिखा गया। अर्थात् धर्म भावना की प्रधानता के कारण राम स्थान (अयोध्या) की भाषा के साहित्य में अवधी और कृष्ण स्थान (मथुरा) का साहित्य ब्रज में रचा गया था। जो गद्य की अपेक्षा पद्य में अधिक था। दक्खिनी, डिंगल, मैथिली, और खड़ीबोली में भी साहित्य लिखा गया था। मध्यकालीन साहित्यकारों में जायसी, सूर, मीरा, तुलसी, कबीर, केशव, बिहारी, भूषण, देव, बुरहानुद्दीन, नुसरती, कुली कुतुबशाह, वजही तथा वली आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

♦ **आधुनिक काल (1800 ई. से अब तक)**

आधुनिक कालीन हिंदी में पूर्ववर्ती दो कालों की तुलना में काफी परिवर्तन दिखाई देता है। जो निम्ननुसार है -

♦ ध्वनि :

- i) आधुनिक काल में शिक्षा व्यवस्था के कारण कचहरियों की भाषा उर्दू होने के कारण 'क, ख, ग, ज, फ' का प्रसार सुशिक्षित लोगों तक हुआ किंतु आजादी के बाद अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से 'क, ख, ग' के प्रयोग में कमी आयी।
 - ii) अंग्रेजी के प्रभाव के कारण हिंदी में 'ऑ' ध्वनि प्रयुक्त हुई, उदा. डॉक्टर, वॉटर, कॉटन, कॉमर्स आदि। अन्यत्र 'आ' का ही प्रयोग होता है।
 - iii) अंग्रेजी के प्रभाव स्वरूप हिंदी में 'ड्र' स्वर बढ़ गया।
 - iv) आदिकालीन हिंदी में 'ऐ' 'औ' का उच्चारण 'अए' 'अओ' था। बल्कि आधुनिक काल में इनकी स्थिति भिन्न हुई।
- क) पश्चिमी क्षेत्र में आज मूल स्वर के रूप में उच्चारित होते हैं।
- ख) पूर्वी हिंदी क्षेत्र में 'ऐ' 'औ' का उच्चारण संयुक्त स्वर AB, AC रूप में होता है।
- ग) नैया, वैयाकरण, कौआ जैसे शब्दों में पश्चिमी तथा पूर्वी में 'ऐ', 'औ' का उच्चारण AB, AC संयुक्त स्वर के रूप में होता है।
- व) आधुनिक काल में कोई शब्द अकारांत नहीं रहा।
- vi) आदिकालीन और मध्यकालीन 'व' ध्वनि की दंतोष्ठता कम हो गई थी।

♦ व्याकरण :

- i) हिंदी की विभिन्न बोलियों के व्याकरण की स्थिति अलग-अलग सी हो गई थी। सूर, बिहारी, देव की ब्रजभाषा और जायसी, तुलसी की अवधी आदि इस बात का प्रमाण है। इन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त हुई तो पृथक भाषा की संज्ञा प्राप्त होने की संभावना पैदा हुई।
- ii) इस काल में हिंदी पूर्णतः वियोगात्मक बन गई थी।
- iii) प्रेस, रेडियो एवं शिक्षा के प्रचार-प्रसार से और महावीर प्रसाद द्विवेदी के सहयोग से हिंदी का व्याकरण स्थिर हुआ है।
- iv) आधुनिक काल के प्रचार-प्रसार के माध्यम तथा अंग्रेजी के प्रभाव से हिंदी भाषा वाक्य रचना, मुहावरा, तथा लोकोक्ति के क्षेत्र में प्रभावित हुई थी। विरामचिह्नों के माध्यम से भी वह अंग्रेजी से प्रभावित हुई।
- v) आधुनिक काल में हिंदी भाषा रूप-रचना तथा वाक्य रचना क्षेत्र में परिवर्तित हो रही है। उदा. 'कीजिए' के लिए 'करिए', 'मुझे' के लिए 'मेरे को', 'मुझको' के लिए 'मेरे' से 'नहीं जाता है' के स्थान पर 'नहीं जाता', 'न जा रहा', 'नहीं जा रहा है' आदि नए रूप आ रहे हैं।

♦ **शब्द समूह :**

शब्द भंडार की दृष्टि से देखा जाए तो सन् 1850 ई. तक मध्यकाल का ही शब्द भंडार था, किंतु उसके पश्चात् अंग्रेजी के शब्द आने लगे थे। साथ ही आर्य समाज के प्रचार-प्रसार से तत्सम शब्दों की संख्या बढ़कर तद्भव शब्द हिंदी से निकल गए थे। सन् 1900 ई. के बाद प्रसाद, पंत, महादेवी वर्मा आदि साहित्यकारों के साहित्य में तत्सम शब्दों की अधिकता दिखाई देने लगी थी। द्विवेदी और छायावादी काल के बाद प्रगतिवाद में तद्भव शब्दों में वृद्धि हुई और तत्सम शब्दों का प्रयोग कम मात्रा में होने लगा था। सन् 1947 ई. के बाद पुराने शब्दों का प्रयोग नए अर्थ में होने लगा था। जैसे 'सदन' शब्द का प्रयोग राजसभा तथा लोकसभा के लिए होने लगा। नाटक, उपन्यास कहानी तथा कविता में बोलचाल की भाषा प्रयुक्त होने लगी उसमें अरबी, फारसी, तथा अंग्रेजी के जनप्रचलित शब्दों का प्रयोग होने लगा। आलोचना की भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ गया। हिंदी में पारिभाषिक शब्दों की संख्या बढ़ने लगी है। आज वह लगभग डेढ़ लाख तक पहुँच गई है। अर्थात् हिंदी नए शब्दों से समृद्ध होते हुए दिन-ब-दिन समृद्ध होती जा रही है।

♦ **साहित्य :**

आधुनिक काल में भारतेन्दुकाल से मुख्य रूप से हिंदी साहित्य का विकास होता गया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साथ भारतेन्दु मंडली के रचनाकार, द्विवेदी, छायावादी, छायावादोत्तर, प्रगतिवाद और प्रयोगवादी काल के रचनाकारों द्वारा गद्य-पद्य में प्रचुर मात्रा में साहित्य रचा गया। वर्तमान में भी काफी मात्रा में लेखन हो रहा है। मैथिलीशरण गुप्त, दिनकर, प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, पंत, निराला, सुदर्शन, जैनेंद्र, यशपाल, अज्ञेय, बच्चन, महादेवी वर्मा तथा नागार्जुन जैसे रचनाकारों की रचनाओं से हिंदी भाषा शिखर तक पहुँचने लगी है। उत्तरोत्तर साहित्य में हिंदी का प्रयोग बढ़ने लगा है।

संक्षेप में शौरसेनी, अर्धमागधी और मागधी अपभ्रंश से निकली हिंदी का आज दिन-ब-दिन विकास होता जा रहा है। वर्तमानकाल में साहित्य के माध्यम से व्यवहृत खड़ीबोली हिंदी सार्वदेशिक होती जा रही है। यह सभी भाषाओं से शब्दों को ग्रहण करते करते अपने कोमल स्वभाव से ऊँचाई की ओर बढ़ने लगी है।

3.2 लिपि विकास का सामान्य परिचय :

प्रस्तावना:

लिपि भाषा के अध्ययन का आधार है क्योंकि ध्वनियों को रेखाओं में व्यक्त करने की कला ही लिपि कहलाती है। ध्वनियाँ अस्थायी होती हैं, तथा वक्ता और श्रोता के बीच संप्रेषण करती हैं। अतः इनके प्रसार की या संप्रेषण की एक सीमा होती है, लेकिन लिपि भाषा का वह स्थायी रूप है जो सदियों तक अक्षुण्ण रह सकता है तथा मानव की सभ्यता के विकास में भाषा के इसी लिखित रूप का महत्व सर्व परी है। इसका प्रसार अतिव्यापक है तथा इसके संप्रेषण की कोई सीमा नहीं। लिपि द्वारा संसार में कहीं भी कभी भी संप्रेषण किया जा सकता है।

आदिमानव के पास पहिले भाषा ही बनी होगी। एक दुसरे से अपनी वस्तु को अलग करने के लिए मनुष्य ने कुछ लिखित चिह्न बनाये होंगे। धोबीओं के चित्र संभवतः उसी के अवशेष हैं। भाषा मानव की वाणी है, जब कि लिपि उस वाणी को लिखित रूप में व्यक्त करने का माध्यम है।

मानव सभ्यता के विकास के साथ - साथ लिपियों का भी विकास हुआ। आरंभिक काल में मनुष्य अपने विचार संकेतो, चित्र, और प्रतिकों के द्वारा व्यक्त करता था। धीरे - धीरे इन संकेतो, चित्र, और प्रतिकों ने व्यवस्थित रूप धारण किया और लिपियों का जन्म हुआ।

3.2.1 लिपि शब्द का अर्थ :

‘लिपि’ शब्द संस्कृत के ‘लिप’ धातू से बना है। जिसका अर्थ है ‘लपेटना’। मानव भाषा को अंकित करने का साधन लिपि है। जब मनुष्य की शाब्दिक अभिव्यक्ति को सांकेतिक चिन्ह के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए उन चिन्हों में उसका अर्थ लीपन किया जाता है, तब लिपि का जन्म होता है। किसी भी भाषा की समृद्धि में लिपि का योग सर्वाधिक होता है।

3.2.2. लिपि की उत्पत्ति :

लिपि की उत्पत्ति के बारे में अनेक विचारधाराएँ प्रचलित हैं। अधिकतर विद्वान यही मानते हैं कि लिपि ईश्वर प्रदत्त होती है। देवनागरी का विकास ब्राम्हि से माना जाता है। इस का तर्क दिया जाता है कि इस लिपि को भगवान ब्रह्मा ने बनाया है, इसलिए यह ब्राम्हि कहलाती है। परंतु यह सिर्फ एक कल्पना मात्र है श्रवस्तूतः लिपियों का विकास चित्र, चिन्ह और आडी - तिरछी आकृती से हुआ है। ये चित्र या रेखाये मनुष्य ने अपने तत्कालीन समज एवं समस्याओं के अनुसार खिंची थी, तथा समय समय पर इसमें सुधार होते रहे और आज उसे यह रूप प्राप्त है।

3.2.3 लिपि का इतिहास :

लिपि का काल एवं स्वरूप विवादास्पद है। निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता की कब मानव ने लिपि के रूप में भाव प्रकाशन का कार्य आरंभ किया। उपलब्ध सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है की, 4000 ई. पूर्व मध्य तक लेखन की किसी भी अभिव्यक्ति पद्धति का कहीं भी विकास नहीं हुआ था और इस प्रकार के प्राचीनतम अव्यविस्थित प्रयास 10000 ई.पू.से भी कुछ पूर्व किए गए थे। इसका मतलब इन दोनों के बीच अर्थात्, 10000 ई.पू. से 4000 ई. पू. तक लिपि का विकास धीरे धीरे होता रहा होगा। उपलब्ध विकास से यह तथ्य सामने आता है की चित्र लिपि ही मनुष्य की आरंभिक लिपि रही होगी। प्राचीन मनुष्य द्वारा गुफा में अंकित चित्र ही इस तथ्य का आधार है।

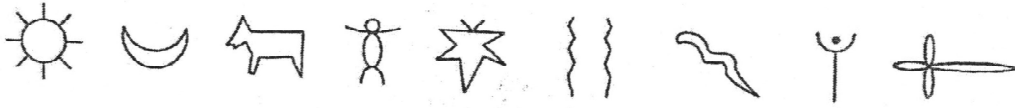
अ.क्र.	काल	लिपि
१.	आरंभिक काल	चित्र लिपि
२.	विकास काल	सूत्र लिपि
३.	मध्यकाल	प्रतीकात्मक लिपि
४.	उत्तर मध्यकाल	भावमूलक लिपि
५.	आधुनिक काल	ध्वनिमूलक लिपि
६.	अतिआधुनिक काल	इलेक्ट्रॉनिक लिपि , कम्प्युटर भाषाएँ

आरंभ में लिपियाँ चित्रमूलक थी, वे धीरे - धीरे से धागे के रूप में बदली और प्रतीक एवं भाव से होते हुए ध्वनिमूलक में पहुँची। इसका विकासक्रम उपरोक्त रूप से है।

चित्र लिपि :

चित्रों के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति चित्र लिपि के नाम से अभिहित होती है। यह भाव व्यक्त करने का आदिम तरीका है। प्राचीन काल में मनुष्य गुफाओं की दिवार या अन्य किसी वस्तु पर, पेड की छाल पर, लकड़ी, हड्डी या सिंग जैसे कठिन वस्तुओं पर आड़ी तिरची रेखाओंको उकेरकर लिखता था। ऐसे पुराने चित्र मेरो पोटामिया, ब्रिटेन, युनान, सीरिया, स्पेन, पोर्तुगाल, ब्राझील, कैलिफोर्निया, ऑस्ट्रेलिया आदी जगह पर देखने को मिलते हैं।

अतः आरंभिक काल में मानव वस्तुओं के चित्र बनाकर अपने विचार व्यक्त करता था। जैसे सूर्य के लिए सूर्य का चित्र, पशु के लिए पशु का चित्र।



चित्र लिपि में किसी वस्तु को उसके चित्र द्वारा दिखाया जाता था। प्राचीन काल की यह लिपि एक प्रकार से आंतरराष्ट्रीय लिपि थी। सभी जगह पर लोग इसे समझ लेते थे। चित्र लिपि में स्थूल वस्तु का चित्रण तो हो सकता था किंतु विचार एवं भावों की अभिव्यक्ति इसमें संभव नहीं थी। मनुष्य का चित्र बनाना सरल था पर किसी विशिष्ट व्यक्ति को चित्र के माध्यम से अंकित करना कठिन था। अतः समाज में ऐसे भी कुछ लोग रहे होंगे जिन्हें चित्र निकालना संभव नहीं था। वैसे लोगों को अपने विचार व्यक्त करना अत्यंत कठिन था।

ऐसा भी कहा जाता है कि चित्र लिपि विकसित होते होते प्रतीकात्मक हो गई। अत्यंत शीघ्रता की स्थिति में किसी व्यक्ति अथवा वस्तु का चित्रण पूर्ण न होने पर उसके स्थान पर प्रतीक मात्र से ही काम चलाया। ऐसी स्थिति में प्रतीकात्मक या रूढ़ चिन्हों को याद रखने की आवश्यकता महसूस होने लगी।

सूत्र लिपि :

यह लिपि विश्व के अनेक देशों में प्रचलित थी। इस लिपि को भारत के साथ साथ अन्य देशों में भी देखा जा सकता है। स्मरण के लिए आज भी कई लोग रुमाल, पल्लू आदी में गांठ बांध देते हैं। प्राचीन काल में सूत्र, रस्सी, पेड की खाल आदी में गांठ लगाई जाती थी। कई धार्मिक विधियों में गांठ बांधना, पीपल के वृक्ष पर धागे के चक्कर लगाना आदि इसी के उदाहरण हैं।

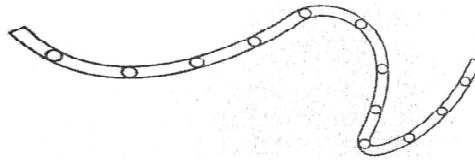
सूत्र लिपि के प्रकार निम्नसार हैं -

1. रस्सी में रंगबिरंगी सूत्र बांधकर
2. रस्सीको रंगबिरंगी रंगों से रंगा कर
3. रस्सी या जानवरों की खाल इत्यादी में विभिन्न रंगों के मोती, घोंघे, मुँगे या मणके इत्यादी बांधकर
4. रस्सियों की विभिन्न लंबाईयाँ बनाकर

5. रस्सियों की विभिन्न मोटाईया बनाकर
6. रसियों में भांति - भांति की विभिन्न दूरियों पर गांठ लगाकर
7. दंडे के विभिन्न स्थानों पर विभिन्न मोटाईयाँ या रंगों की रसियाँ बांधकर

इस तरह के लेखन का उल्लेख पाचवी सदी के ग्रंथकार रेहोडॉट्स ने किया। पेरू, चीन, तिब्बत, बंगाल, जपान के द्वीप टांजानिया इत्यादि जगह पर सूत्र लिपि मिलती है।

रंजानिया की सूत्रलिपि :

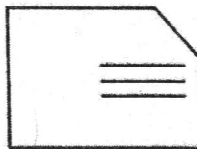


प्रतीकात्मक लिपि :

इस लिपि में संकेतो के माध्यम से संदेश संप्रेषण होता था। भावाभिव्यक्ति प्रतीकात्मक थी। इसे शुद्ध रूप से लिपि नहीं कह सकते, पर दूरस्थ व्यक्ति के लिए भावाभिव्यक्ति का एक साधन था। कई देशों और कबीलों में इसका प्रचार उस काल में प्रचलित था। तिब्बती - चीनी सीमा पर मुर्गे के बच्चे का कलेजा, उसकी चर्बी के तीन टुकड़े तथा एक मिर्च लाल कागज में लपेटकर भेजने का अर्थ होता था युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। इसका नमूना भारत में भी देखा जा सकता है। जब किसी की मृत्यु का संदेश कार्ड पर भेजा जाता है तो कार्ड के एक कोने को काट दिया जाता है। कहीं खतरा हो तो लाल कपड़ा लहराते हैं। नए मकान और वाहन पर निंबू और मिर्च लटकाई जाती है। या काली हंडी में राक्षस का चित्र बना देते हैं। युद्ध में सफेद झंडा फहराना स्काउटों का हाथ से बात - चीत करना इसी लिपि के अंतर्गत आता है।



निंबू के ऊपर 7 हरी मिर्च



शोक संदेश के लिए कोना कटा पोस्ट कार्ड



हंडी पर जीभ लपलपाता राक्षस

भाव मूलक चित्र लिपि :

जो लिपि भाव, विचार तथा वस्तुओं को प्रकट करती है उसे भावमूलक चित्र लिपि कहते हैं। यह चित्रों पर आधारित रेखात्मक लिपि होती है। यह चित्रलिपि का ही विकसित रूप है। इन दोनों में अंतर इतना ही है कि चित्र लिपि में पैर का चित्र पैर की अभिव्यक्ति करता है किंतु भावमूलक लिपि में वह चलने की क्रिया का द्योतक होता है। आंखों के साथ ही आंसू चित्रित करने का भाव या दुखी होना दर्शाता है। भावमूलक लिपिके अनेक उदाहरण अमेरिका, चीन उत्तर आफ्रिका में देखने को मिलते हैं। इस लिपि की एक महत्वपूर्ण

विशेषता है कि इस लिपि के द्वारा बड़े बड़े पत्र भी लिखे जाते हैं। इस लिपि के बहुत से चिन्ह चिनी लिपि में प्राप्त होते हैं। चित्र लिपि की तुलना में भाव लिपि अधिक सरल, कम समय देने वाली तथा अल्प श्रमसाध्य थी। फिर भी उसकी त्रुटियों से मानव परिचित था। अतः इन्हीं त्रुटियों को दूर करने के लिए मनुष्य ने ध्वनिमूलक लिपि का आविष्कार किया।

वर्तमान समय में बौद्धिक परीक्षा के लिए चित्र देखकर उस पर घटना का विश्लेषण करना या चित्र कथा लिखना इस प्राचीन लिपि का आधुनिक रूप है।

आज कल फोटोग्राफ तथा रेखाचित्र दिखाकर या देखकर बच्चों से कहानी लिखवाना इस लिपि परंपरा का अवशेष है।

भाव ध्वनिमूलक लिपि :

ऐसी लिपि कुछ बातों में प्रतीकात्मक होती है और कुछ बातों में ध्वनिमूलक। इसमें कुछ चिन्ह चित्रात्मक होते हैं, कुछ भावमूलक होते हैं और कुछ ध्वनिमूलक होते हैं। अर्थात् इनमें इन सब का यथा संभव उपयोग होता है।

मेसोपोटेमियन, मिश्रि तथा हिंदी आदि लिपि या इसी लिपि के अंतर्गत आती हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सिंधु घाटी की लिपि भी इसी श्रेणी की है।

ध्वनीमूलक लिपि :

इस लिपि में प्रत्येक ध्वनि के लिए एक अक्षर का या चिन्ह का संकेत निर्धारित कर लिया जाता है, तथा उसे उसी रूप में उच्चारित करना पड़ता है। इन अक्षरों को क्रम से लगाकर शब्द बनते हैं और शब्दों को व्याकरण के सहयोग से वाक्य में परिवर्तित किया जाता है। तथा वाक्यों से अर्थ निकाले जाते हैं। इस प्रकार की लिपि आधुनिक लिपि है। अतः आधुनिक लिपि में प्रत्येक चिन्ह किसी विशेष ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता है। देवनागरी, रोमन आदि इसी प्रकार लिपियाँ हैं।

ध्वनिमूलक लिपि के दो भेद हैं –

अ) अक्षरात्मक लिपि :

इसमें चिन्ह किसी अक्षर को व्यक्त करता है, वर्ण को नहीं। नागरी लिपी इसका उत्तम उदाहरण है। इसके व्यंजनो में जो ध्वनियाँ होती हैं; यथा, 'क' वर्ण में क् + अ दो वर्ण हैं और इस में 'क' व्यंजन है और अ स्वर है। यही कारण है कि व्यवहार में उचित होते हुए भी इस लिपि के वैज्ञानिक विश्लेषण में कठिनाई होती है। अरबी, फारसी, बांग्ला, गुजराती, ओडिया, तेलगू आदि लिपियाँ अक्षरात्मक ही हैं।

ब) वर्णनात्मक लिपि :

इसमें ध्वनि की प्रत्येक इकाई के लिए अलग चिन्ह होते हैं और उनके आधार पर सरलता से किसी भी भाषा का कोई भी शब्द लिखा जा सकता है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह आदर्श लिपि है। रोमन लिपि इसी प्रकार की लिपि है। इसमें घ में केवल क ही होता है। इस लिपि का वैज्ञानिक विश्लेषण सरलता से किया जाता है।

इस प्रकार लिपि के विकास क्रम में चित्र लिपि प्रथम अवस्था की लिपि है और वर्णनात्मक, ध्वनिमूलक लिपि अंतिम अवस्था की है श्र चित्रात्मक लिपि का विकसित रूप भावमूलक लिपि है और भावमूलक लिपि का विकसित एवं श्रेष्ठ रूप ध्वनीमूलक लिपि है ।

3.3 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता :

मानव जीवन में भाषा का अत्यंत महत्व है । भाषा का वर्णमाला एवं लिपि से घनिष्ठ संबंध है । प्रत्येक भाषा के लिए एक अलग वर्णमाला आवश्यक होती है । इस बारे में डॉ. कैलासचंद्र भाटिया कहते हैं, वर्णमाला का ध्वनियों के सांकेतिक चिन्ह - विशेष की ही संज्ञा लिपि है । लिपि शब्द लिपते से निकला है, जिसके अनेक अर्थ हैं । उदा. - लिपण करना ,लेप देना आदि । जब मनुष्य की शाब्दिक अभिव्यक्ति को सांकेतिक चिन्हों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए उन चिन्ह में उसका अर्थ लिपन किया जाता है, तब लिपि का जन्म होता है। किसी भी भाषा की समृद्धि में लिपि का योग सर्वाधिक होता है ।

देवनागरी लिपि को विश्व अत्यंत वैज्ञानिक लिपियों में माना जाता है । हिंदी, संस्कृत, मराठी और नेपाली आदि भाषाएं इसी लिपि में लिखी जाती हैं । इसकी वैज्ञानिकता का आधार इसकी ध्वन्यात्मकता, व्यवस्थित क्रम तथा उच्चारण की स्पष्टता है ।

देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है। भारतीय संविधान ने इसे राजलिपि ,राष्ट्रलिपि के पद पर प्रतिष्ठित किया है । किसी भाषा का ध्वन्यात्मक प्रतिनिधित्व करने वाली लिपि ही वैज्ञानिक और पूर्ण लिपि कहलाती है।

जब हम देवनागरी लिपि की तुलना संसार की अन्य लिपि से उदा. रोमन, अरबी, आदि से करते हैं तो पता चलता है कि उन की अपेक्षा देवनागरी में कुछ ऐसे गुण या विशेषताएँ हैं जिनके फलस्वरूप उसे वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है । देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता संबंधी विद्वानों ने अपने मत निम्नलिखित व्यक्त किए हैं-

विदेशी विद्वान :

- 1) **प्रो. मेनियर विल्यम्स :** सफल रूप से कहा जा सकता है कि देवनागरी अक्षरों से बढ़कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरे नहीं है ।
- 2) **पिटमैन :** संसार में यदि सर्वांश पूर्ण अक्षर है तो देवनागरी के है।
- 3) **ग्राऊस :** कचहरी के लिए फारसी की यह शैली स्वीकार कर लेने पर विवश होकर नागरी लिपि ही छोड़ देनी पड़ेगी ,जो एक सर्वोत्तम वैज्ञानिक लिपि है ।

भारतीय विद्वान :

- 1) **सेठ गोविंद दास :** हमारी देवनागरी इस देश की ही नहीं ,समस्त संसार की लिपियों में से सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है। हमारी लिपि में स्वरों और व्यंजनों का जैसा वैज्ञानिक पृथक्करण है वैसा अन्य लिपियों में नहीं।
- 2) **डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी :** संसार की लिपियों में भारतीय लिपियों की यह विशेषता उल्लेखनीय है कि इसके वर्णक्रम नितांत वैज्ञानिक है ।

- 3) डॉ. देवेंद्रकुमार शास्त्री : विश्व की आधुनिक सभी लिपियों में देवनागरी लिपि का स्थान सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि यह संसार की लिपियों में सबसे अधिक वैज्ञानिक है ।

देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता :

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है । इसकी वैज्ञानिकता निम्नलिखित विशेषताओं से स्पष्ट होती है :-

1) अक्षरों का वैज्ञानिक वर्गीकरण:

देवनागरी की वर्णमाला का क्रम वैज्ञानिक है । जैसे - स्वर पहले वह भी ऋस्व और दीर्घ क्रम से बाद में व्यंजन । व्यंजन भी उच्चारण स्थान तथा प्रयत्न के अनुसार कंठ, तालव्य, मूर्धन्य, दंत, ओष्ठ आदि रूप में है । व्यंजन वर्णमाला में भी पहले दो अघोष व्यंजन (क, ख, च, छ) फिर दो घोष (ग, घ, ज, झ आदि) और पाचवा स्वर अनुनासिक है । इसी प्रकार 'क' वर्ग आदि पांचो वर्गों के दूसरा और चौथा वर्ण (ख, घ आदि) महाप्राण है और पहला तथा तीसरा क, ग आदि) अल्पप्राण है । वर्ण की ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था विश्व की किसी भी भाषा में नहीं है । रोमन ,अरबी लिपि में 'स्वर' 'व्यंजन' का अलग अलग वर्गीकरण नहीं है, तथा उच्चारित ध्वनियों का उच्चारण स्थान के क्रमानुसार वर्गीकरण भी नहीं है, जो देवनागरी में निम्नप्रकार पाया जाता है -

- | | | |
|-------------|---|---------------|
| 1) कंठ | - | क, ख, ग, घ, ङ |
| 2) तालव्य | - | च, छ, ज, झ, |
| 3) मूर्धन्य | - | ट, ठ, ड, ढ, ण |
| 4) दंत्य | - | त, थ, द, ध, न |
| 5) ओष्ठ | - | प, फ, ब, भ, म |

देवनागरी लिपि के यह वर्ण ध्वनियों के उच्चारण स्थान को ध्यान में रखकर पंक्तीबद्ध बिठाए गये हैं जो ध्वनिया क्रमशः कंठ से शुरू होकर ओष्ठ तक संपन्न होती है ।

2) एक ध्वनि के लिए एक लिपि चिह्न:

प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र लिपि चिह्न आवश्यक है । देवनागरी में प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र एक - एक लिपि चिह्न है । जब कि संसार की अन्य लिपियों में यह व्यवस्था नहीं है । जैसे रोमन और उर्दू श्र रोमन में उ,ट,घ तीन लिपि चिह्न हैं और उच्चारित ध्वनि 'क' एक ही है ।

उदा. Cat = कैट, Kite = काईट, Queen = क्वीन । मतलब, रोमन लिपि में 'क' ध्वनि के लिए K, Q, C का प्रयोग होता है । उर्दू में भी 'स' ध्वनि के लिए तीन लिपि चिह्न हैं - 'से', स्वाद, सीन इसी प्रकार 'ज' के लिए 'जे' तथा 'जोय' । इस प्रकार एक ध्वनि के लिए अनेक लिपि चिह्न का प्रयोग अवैज्ञानिक है ।

3) गद्यात्मकता एवं व्यावहारिकता :

देवनागरी लिपि गद्यात्मक एवं व्यावहारिक है। हिंदी भाषा का अन्य भाषाओं के साथ संपर्क आने के कारण उसे नई - नई ध्वनियों की आवश्यकता महसूस हुई। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु देवनागरी में नई लिपि चिह्न का निर्माण किया गया। क, ख, ग, ज, फ, ऑ इत्यादी चिह्न इसके उदाहरण हैं। इसी तरह अन्य कुछ लिपि चिह्न का निर्माण किया जाए तो देवनागरी लिपि में विश्व की सारी भाषाओं को लिखने की क्षमता पैदा हो सकती है। तथा वह अंतराष्ट्रीय लिपि बनने की क्षमता रख सकती है।

4) निश्चित उच्चारण :

देवनागरी लिपि में वर्णन के उच्चारण निश्चित हैं। इसके विपरीत रोमन में लिखा कुछ जाता है और उसका उच्चारण कुछ अलग ही होता है। (put) शब्द में 'ण' का उच्चारण 'उ' है तो (But) शब्द में 'ण' का उच्चारण अ है। इसके विपरीत देवनागरी में प्रत्येक वर्ण की उच्चारित ध्वनि निश्चित होती है।

5) जैसे लिखा जाए - वैसे बोला जाए :

देवनागरी में जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है वही बोला जाता है। अर्थात् देवनागरी लिपि में प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होता है। जब की रोमन में बहुत से वर्ण हैं, जिनका उच्चारण नहीं होता। उदा - Knowledge का उच्चारण नॉलेज होता है। इसमें जुव आदि वर्ण का उच्चारण नहीं होता; उसी प्रकार Night, Half आदि शब्दों के उच्चारण ऐसे ही हैं।

6) ऋस्व और दीर्घ की स्पष्टता :

यह देवनागरी की निजी विशेषता है। इसमें ऋस्व 'इ' और दीर्घ 'ई' में स्पष्ट भेद है। पर अंग्रेजी में दोनों ध्वनियों के लिए आई से ही काम चला जाता है। जैसे (Nib) निब में 'i' ऋस्व है और Mschine में 'i' दीर्घ है।

7) छोटे - बड़े की उलझन नहीं :

देवनागरी लिपि में रोमन वर्णों के समान छोटे - बड़े अर्थात् कैपिटल - स्मॉल वर्ण की उलझन नहीं; जैसे, A / a, B / b आदि।

8) कलात्मकता, सुंदरता एवं सुगठीतता :

नागरी लिपि के वर्ण अत्यंत कलात्मक, सुंदर एवं सुगठीत ढंग से लिखे जाते हैं। इस लिपि में लिखित शब्द अपेक्षाकृत कम स्थान घेरते हैं। जैसे देवनागरी में महेश्वर की अपेक्षा अंग्रेजी में लिखित Maheshwara शब्द अधिक स्थान घेरता है।

9) स्वर और व्यंजन का योग :

देवनागरी लिपि के प्रत्येक व्यंजन में स्वर योग है। जैसे कि - क = क + अ, ब = ब + अ आदि। अन्य लिपियों में इस प्रकार का योग दिखाई नहीं देता।

10) व्यापक क्षेत्र:

देवनागरी लिपि का क्षेत्र बहुत व्यापक है। देवनागरी लिपि देश के बहुत बड़े क्षेत्र में प्रयुक्त हुई है। इसका प्रयोग हिमालय से लेकर महाराष्ट्र तक हरियाणा से लेकर बिहार तक है।

इस प्रकार यहा देवनागरी लिपि की दस विशेषताएं प्रस्तुत है, तथापि कुछ विद्वानो ने इसकी अक्षरात्मक वर्णमाला ही पूर्णता, लेखन मुद्रण की एकरूपता अर्ध अक्षर रुपों की सुगमता आदि कुछ और विशेषताओं का भी उल्लेख किया है जिनके आशय उपरोक्त विशेषताओं मे समाहित है ।

देवनागरी लिपि अपनी ध्वन्यात्मकता, व्यवस्थित क्रम तथा उच्चारण की स्पष्टता और सरल लेखन पद्धति के कारण अत्यंत वैज्ञानिक मानी जाती है। यही कारण है कि यह भारतीय भाषाओं की सबसे विकसित और प्रभावशाली लिपियों में से एक है।

4. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

अ) निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पर्यायों में से सही पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए ।

- 1) शौरसेनी अपभ्रंश से भाषा का विकास हुआ।
क) पश्चिमी हिंदी ख) अर्धमागधी
ग) बिहारी घ) बघेली
- 2) पश्चिमी हिंदी की बोली है।
क) खड़ी बोली ख) जयपुरी
ग) भोजपुरी घ) बघेली
- 3) हिंदी भाषा का .. वर्षों का इतिहास है ।
क) 1000 ख) 1500
ग) 500 घ) 1200
- 4) आदिकालीन हिंदी में अपभ्रंश के स्वर थे ।
क) आठ ख) सात
ग) चार घ) दो
- 5) मध्यकालीन हिंदी पर भाषा का अधिक प्रभाव था ।
क) फारसी ख) मराठी
ग) हिंदी घ) गुजराती
- 6) भाषा के अध्ययन का आधार .. है ।
क) वाक्य ख) पद
ग) अक्षर घ) लिपि

- 7) लिपि शब्द संस्कृत के धातु से बना है ।
क) विप ख) रिप
ग) लिप घ) डिप
- 8) चित्र के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति लिपि के नाम से अभिहित होती है ।
क) चित्र ख) सूत्र
ग) भाव घ) वाद
- 9) स्मरण के लिए आज भी लोग रुमाल, पलू में बांधते हैं ।
क) माठ ख) गांठ
ग) खान घ) डोर
- 10) त यह व्यंजन है ।
क) दंत्य ख) नासिक
ग) अघोष घ) तालव्य

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक – एक वाक्य में लिखिए ।

- 1) हिंदी भाषा के विकास का मध्यकाल कहां से कहां तक माना गया है ?
- 2) हिंदी भाषा की कितनी उपभाषाएं हैं ?
- 3) अवध का प्राचीन नाम कौन सा था ?
- 4) प्रतिकात्मक लिपि में कार्ड का कोना काटना क्या दर्शाता है ?
- 5) दंत्य व्यंजन कौन से हैं ?

2.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ ।

- 1) दीर्घ – वह वर्ण जिसका उच्चारण खींचकर हो – जैसे ‘ अ ’ का दीर्घ ‘ आ ’
- 2) कंठ्य – वह वर्ण जिसका उच्चारण कंठ से होता है । जैसे – क , ख , ग , घ
- 3) तालव्य – तालू से वह वर्ण जिसका उच्चारण किया जानेवाला – च , छ , ज ,
- 4) मूर्धन्य – वह वर्ण जिसका उच्चारण मूर्धे की सहायता से होता है – ट , ठ , ड
- 5) दंत्य – दातो की सहायता से उच्चारण किया जानेवाला ।
- 6) ओष्ठ्य – जिनका उच्चारण ओंठों से हो ।
- 7) अघोष – अल्पध्वनियुक्त ।

- 8) अल्पप्राण - व्यंजन के प्रत्येक वर्ग का पहला , तीसरा तथा पांचवा अक्षर ।
- 9) महाप्राण - वह वर्ण जिसके उच्चारण में प्राणवायु का विशेष प्रयोग हो ।
- 10) अनुनासिक - नासिक विवर की मदद से मुखोच्चारित ध्वनि (अक्षर) न , म

2.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर :

- अ) 1) पश्चिमी हिंदी 2) खड़ी बोली 3) 1000 4) आठ 5) फारसी
6) लिपि 7) लिप 8) सूत्र 9) गांठ 10) दंत्य

- आ) 1) 1500 ई. से 1800 ई. तक ।
2) हिंदी भाषा की पांच उपभाषाएं हैं ।
3) अवध का प्राचीन नाम कोसला था ।
4) प्रतिकात्मक लिपि में कार्ड का कोना काटना किसी की मृत्यु के समाचार को दर्शाता है ।
5) त , थ, द, ध, न - दंत्य व्यंजन हैं ।

2.7 सारांश

- 1) बोलियों की दृष्टि से हिंदी भाषा का विशेष महत्व है । संख्या के संदर्भ में विद्वानों में मतभेद जरूर है..
- 2) लिपि के विकास क्रम में चित्र लिपि, सूत्र लिपि , प्रतिकात्मक लिपि , भावमूलक लिपि, भावध्वनिमूलक लिपि , ध्वनिमूलक लिपि अत्यंत महत्वपूर्ण लिपि है ।
- 3) देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है । भारतीय संविधान ने इसे राज लिपि के पद पर प्रतिष्ठित किया है । देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है, क्योंकि इसमें संसार की लगभग सभी भाषाओं की ध्वनियों को उच्चारित एवं प्रतिनिधित्व करने वाले चिह्न मौजूद हैं । देवनागरी की अपनी कुछ खास विशेषताएं हैं जो उसकी वैज्ञानिकता सिद्ध करती हैं ।

8 स्वाध्याय:

आ) निम्नलिखित दीर्घोत्तरी प्रश्नों के उत्तर लिखिए ।

- 1) हिंदी भाषा का उद्भव और विकास स्पष्ट कीजिए ।
- 2) लिपि के विकास क्रम का परिचय दीजिए ।
- 3) देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को स्पष्ट कीजिए ।

आ) टिप्पणियाँ या लिखिए :

लिपी विकास चित्र लिपि सूत्र लिपि भावमूलक लिपि ध्वनीमूलक लिपि देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता

9 क्षेत्रीय कार्य :

- 1) चित्र लिपि सूत्र लिपि और प्रतीकात्मक लिपिका सचित्र विश्लेषण कीजिए ।
- 2) देवनागरी लिपि एवं रोमन लिपि का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए ।

10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए :

- 1) भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा डॉक्टर सुधाकर कलावडे
- 2) भाषा और भाषा विज्ञान तेजपाल चौधरी
- 3) भाषा विज्ञान एवं हिंदी भाषा डॉक्टर लक्ष्मीकांत पांडे डॉक्टर प्रमिला अवस्थी



इकाई क्र. 1

भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ, भाषाविज्ञान के अध्ययन का महत्व, मानक वर्तनी के नियम

अनुक्रम :

- 1 उद्देश्य
- 2 प्रस्तावना
- 3 विषय-विवेचन
 - 3.1 भाषाविज्ञान की परिभाषाएँ ।
 - 3.2 भाषाविज्ञान के अध्ययन का महत्व ।
 - 3.3 मानक वर्तनी के नियम ।
- 4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न
- 5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
- 6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
- 7 सारांश
- 8 स्वाध्याय
- 9 क्षेत्रीय कार्य
- 10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1 उद्देश्य :

प्रस्तुत इकाई पढ़ने के बाद आप -

- 1) भाषाविज्ञान का नाम, अर्थ और परिभाषाओं से परिचित हो सकेंगे ।
- 2) भाषाविज्ञान का विकास और वर्तमान स्थिति को समझ सकेंगे ।
- 3) भाषाविज्ञान के अध्ययन के महत्व को समझ सकेंगे ।
- 4) मानक वर्तनी की परिभाषा और मानक वर्तनी के नियमों से परिचित हो सकेंगे ।
- 5) मानक वर्तनी के नियमों का सोदाहरण विवेचन कर सकेंगे ।

2 प्रस्तावना :

‘भाषाविज्ञान’ भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। ‘भाषाविज्ञान’ भाषा संबंधी सभी प्रश्नों और समस्याओं का समाधान करता है। भाषा मनुष्य के परस्पर विचार-विनिमय का साधन है। मानव अपने ध्वनि-यंत्र का प्रयोग कर उससे कई प्रकार की ध्वनियों का उच्चारण कर उनके द्वारा अपने भावों तथा विचारों का प्रकाशन करता है। यह विचार-विनिमय और भाव प्रकाशन प्रायः ध्वन्यात्मक रूप में होता है। अतः स्वाभाविक रूप से भाषाविज्ञान को लेकर कई प्रश्न हमारे मन में उठते हैं। जैसे, भाषाविज्ञान है क्या ? भाषाविज्ञान विज्ञान है या कला ? भाषाविज्ञान की उपयोगिता क्या है ? भाषाविज्ञान का क्या लाभ है ? उसकी परिभाषा क्या है ? आदि। इन्हीं प्रश्नों के संदर्भ में हमें प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करना है।

3 विषय-विवेचन :

यहाँ क्रमशः भाषाविज्ञान की परिभाषाएँ, भाषाविज्ञान के अध्ययन का महत्व तथा भाषाविज्ञान की वैज्ञानिकता को स्पष्ट करने की कोशिश करेंगे तथापि इसके पूर्व भाषाविज्ञान शब्द, भाषाविज्ञान नामकरण, भाषाविज्ञान का विकास, व्याप्ति एवं भाषाविज्ञान की वर्तमान स्थिति जानने के लिए भाषाविज्ञान की पृष्ठभूमि का अध्ययन करना अपने आप में आवश्यक हो जाता है।

भाषाविज्ञान की पृष्ठभूमि :

भाषा का इतिहास अति प्राचीन है। आदिम ग्रंथों की रचना के पूर्व भाषा का जन्म हो चुका था। आधुनिक भाषाविज्ञान का जन्म अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुआ। इसके जनक ‘सर विलियम जोन्स’ माने जाते हैं। वे कलकत्ता हाईकोर्ट के प्रमुख जज थे। उन्होंने रॉयल एशियाटिक सोसायटी के सदस्यों के सामने एक निबंध प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने संस्कृत, ग्रीक और लैटिन भाषाओं में पाए गए साम्य के आधार पर यह मत व्यक्त किया था कि, ‘भारत और यूरोप की भाषाएँ एक ही स्रोत से विकसित हुई हैं।’ इससे भारत और यूरोप की भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन का मार्ग प्रशस्त हुआ। यही भाषाविज्ञान का आरंभ बिंदु था।

प्राचीन काल में भारत की तुलना में पाश्चात्य देशों में भाषाविज्ञान और व्याकरण के क्षेत्र में उतना गहन अध्ययन नहीं हुआ। यूनान में सुकरात, प्लेटो, अरस्तु और डायोनिमस थ्रेक्स ने भाषाविज्ञान के विषयों का गंभीर विवेचन किया है।

7 वीं शताब्दी में भाषावैज्ञानिक अध्ययन में गहराई आई। 20 वीं शताब्दी में तो भाषाविज्ञान के ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन पर केंद्रित भाषाविदों का ध्यान हटकर भाषिक अध्ययन के वर्णनात्मक और एककालिक स्वरूप पर केंद्रित हुआ। 1928 ई. में ‘हेग’ में अंतर्राष्ट्रीय भाषाविज्ञान परिषद का प्रथम अधिवेशन हुआ। इसके फलस्वरूप विभिन्न देशों में भाषाविज्ञान के चार केंद्र स्थापित हुए। इन केंद्रों को लंदन स्कूल, अमेरिकन स्कूल, प्राग स्कूल और कोपन हॅगन स्कूल के नाम से जाना जाता है। 20 वीं शताब्दी के भाषावैज्ञानिकों ने भाषा के अध्ययन को सामाजिक संदर्भों के साथ जोड़कर भाषा को देखने की एक नई दृष्टि प्रदान की है। इसप्रकार पाणिनी, पतंजलि, थ्रेक्स से लेकर सर विलियम जोन्स, ब्लूम फील्ड, चोम्स्की, किशोरीदास वाजपेयी, भोलानाथ तिवारी तक सैकड़ों मनीषियों ने इसे अपने ज्ञान और चिंतन से समृद्ध बनाया है।

भाषा विज्ञान का स्वरूप :-

भाषा विज्ञान का स्वरूप विज्ञान की भाँति हैं किसी भी वस्तु का विशिष्ट या युक्ति सहित ज्ञान यानि विज्ञान। इस दृष्टि से भाषा विज्ञान का स्वरूप निश्चित रूप से विज्ञान की तरह है। फिर यह प्रश्न निर्माण होता है कि किस हद तक भाषा विज्ञान, विज्ञान की तरह है इसके लिए विज्ञान और कला इन दोनों से संबंधित धारणाओं, स्वरूप देखना आवश्यक हैं ।

विज्ञान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह पदार्थों में कार्य-कारण संबंध स्थापित करता है किसी विशिष्ट कारण से कार्य उपस्थित होता है। विज्ञान इसकी खोज करता है कि अगर कोई घटना घटती है या कोई कार्य होता है, तो इसका कारण क्या है? इसी कार्य कारण विश्लेषण से विज्ञान में सुसंबद्धता सुसंगति स्थापित होती है। विज्ञान की दूसरी विशेषता है- प्रयोग चिंतन और मनन के बाद प्रयोगों द्वारा वैज्ञानिक विश्लेषण को प्रामाणिक बनाया जाता है।

भाषा विज्ञान में कुछ हद तक यह विशेषताएँ नजर आती है कि भाषा विज्ञान भाषा में बिखरी हुई सामग्री को एकत्र करके उसका विश्लेषण करता है और उनमें सूत्रता स्थापित करता है, जैसे कोई ध्वनि विशिष्ट दिशा में क्यों परिवर्तित होती है? इसकी खोज और कार्य-कारण संबंध के आधार पर भाषा विज्ञान ध्वनि - परिवर्तन की व्यवस्था को स्पष्ट करता है। भाषा विज्ञान में प्रयोग भी किए जाते हैं। इन बातों से भाषा को 'विज्ञान' मानते हैं। लेकिन यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है कि विज्ञान में कुछ और भी बातें होती हैं। सबसे महत्वपूर्ण उसमें विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं। उसके नियम सार्वकालिक और सार्वत्रिक होते हैं। यह नियम भाषा विज्ञान में नहीं दिखाई देते कारण भाषा में विकल्प होते हैं और उसके नियम एक नहीं होते।

इससे भाषा विज्ञान को कला की भाँति माना जाता है परंतु कला सौंदर्यानुभूति की विशिष्ट अभिव्यक्ति है, कला अभिव्यक्ति कुशल है, कला में वस्तु के प्रति देखने की दृष्टि आशयात्मक होती है परंतु भाषा विज्ञान कला न होकर विज्ञान निकट जान पड़ता है। कारण कला का उद्देश्य मनोरंजन है, तो भाषा विज्ञान का उद्देश्य ज्ञान की वृद्धि है। कला व्यक्ति परत्वे बदलती है, परंतु भाषा विज्ञान होने के कारण उसके तत्व प्रायः परिवर्तित नहीं होते।

इससे कह सकते हैं भाषा विज्ञान का स्वरूप शुद्ध विज्ञान की तरह नहीं है, परंतु वह कला नहीं है, तो समाज विज्ञान की तरह वह भी विज्ञान है, जिसमें कुछ कुछ अपवाद मिलते हैं।

भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ :-

भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ देखने से पूर्व उसका सामान्य अर्थ देखेंगे।

अ) भाषा विज्ञान का सामान्य अर्थ :-

'भाषा विज्ञान' शब्द 'भाषा' और 'विज्ञान' इन दो शब्दों से बना हैं। इसमें 'भाषा' वह साधन है, जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा विचारों और भावों को व्यक्त करते हैं। 'विज्ञान' का अर्थ होता है 'विशिष्ट ज्ञान'। किसी विषय के ज्ञान और विज्ञान में बड़ा भारी भेद हैं। कारण किसी वस्तु के साधारण जानकारी को 'ज्ञान' कहते हैं और उसकी पूरी जानकारी हासिल करना 'विशेष ज्ञान' कहलाता हैं। अतः भाषा विज्ञान का अर्थ है 'भाषा संबंधी' या 'भाषा विषयक' विशेष ज्ञान है। अर्थात् भाषा के सभी अंगों का व्यवस्थित अध्ययन विश्लेषण करके तत्संबंधी नियमों का प्रतिपादन करना ही भाषा का विशिष्ट अध्ययन या भाषा विज्ञान है।

आ) भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ :-

भाषा विज्ञान एक यौगिक शब्द है। भाषा और विज्ञान के योग से इसकी संरचना हुई है। भाषा का शाब्दिक अर्थ बोलना है और विज्ञान का अर्थ वस्तुनिष्ठ विश्लेषण विवेचन है। अतः भाषा विज्ञान का अर्थ स्रोत और उच्चारित सार्थक वाक् का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण और अध्ययन है। प्राच्य एवं पाश्चात्य विद्वानों ने भाषा विज्ञान के कार्य एवं क्षेत्र की व्यापकता का बड़ी गहराई के साथ अध्ययन किया है और तत्संबंधी सिद्धांतों का निरूपण किया है। भारत में भाषा विज्ञान के अध्ययन विश्लेषण की प्राचीन परंपरा प्रमाणित होने पर भी उसे वर्तमान रूप और संदर्भ देने का श्रेय पाश्चात्य विद्वानों को ही है। अतः सबसे पहले पाश्चात्य विद्वानों द्वारा भाषा विज्ञान की जो परिभाषाएँ दी गयी है उसे देखेंगे।

3.1 'भाषाविज्ञान' की परिभाषा :

'भाषाविज्ञान' शब्द :

भाषाविज्ञान शब्द दो शब्दों से निर्मित है भाषा विज्ञान। भाषा मनुष्य की अभिव्यक्ति का साधन है। वह विचार विनिमय का साधन है। भाषा का प्रयोग ध्वनियों पर आधारित होता है। ध्वनियों की विशिष्ट संयोजना सार्थक भाषा का निर्माण करती है। इसी भाषा के माध्यम से मनुष्य अपने भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण करता है।

'विज्ञान' का अर्थ होता है, शास्त्रीय ज्ञान या विशिष्ट ज्ञान। सरल अर्थ में, उसे ज्ञान का विशिष्ट एवं सम्यक अध्ययन कहा जा सकता है। अतः 'भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने वाले विषय को 'भाषा-विज्ञान' कहा जाता है।' शब्द के अनुसार भाषा का विशिष्ट ज्ञान जिसके द्वारा संभव हो, उसे 'भाषा-विज्ञान' कहा जाता है।

'भाषाविज्ञान' का नामकरण :

भाषाविज्ञान के लिए पहले अंग्रेजी में 'साइन्स ऑफ लैंग्वेज' नाम था। किन्तु यह नाम लम्बा होने से चल नहीं सका। तब इसके लिए (Linguistics) लिंग्विस्टिक्स शब्द का प्रचलन हुआ। उसका आधार लैटिन शब्द Lingua (जीभ, जिह्वा) है। वस्तुतः फ्रान्स में ही सर्वप्रथम इसका प्रयोग हुआ था। बाद में अंग्रेजी में 'Linguistics' शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। वैसे तो भाषाविज्ञान शब्द पाश्चात्य विद्वानों की देन है। वर्तमान भाषाविज्ञान का आरंभ 1786 में सर विलियम जोन्स के संस्कृत, लैटिन तथा ग्रीक के तुलनात्मक अध्ययन से माना जाता है।

भाषाविज्ञान के लिए आरंभ में जिन शब्दों का प्रयोग हुआ, उनमें एक नाम था 'कम्पेरिटिव ग्रामर' (Comparative Grammar)। पहले व्याकरण और भाषाविज्ञान को मूलतः एक माना गया था। भाषाविज्ञान की सबसे बड़ी विशेषता तुलना करना है, ऐसा मानकर उसे यह नाम दिया गया था। पर भाषाविज्ञान केवल तुलनात्मक अध्ययन नहीं है यह स्पष्ट होने पर यह नाम छोड़ दिया गया। सन् 1817 ई. में डेवीज ने भाषाविज्ञान के मिलते-जुलते अर्थ में 'ग्लोसॉलोजी' (Glossology) का प्रयोग किया था। 19 वीं सदी के प्रथम तीन चरणों में भाषाविज्ञान के लिए इसी नाम का प्रयोग किया था। इसी प्रकार प्रिचर्ड ने 1841 ई. में 'ग्लोटॉलाजी' (Glottology) का प्रयोग भाषाविज्ञान के लिए किया। मैक्समूलर ने थोड़े भिन्न अर्थों में इस शब्द का प्रयोग किया किंतु बीसवीं सदी के आरंभ में इस नाम को भी छोड़ा गया।

आधुनिक काल में भाषाविज्ञान के लिए भाषाशास्त्र, भाषाविचार, भाषालोचन, तुलनात्मक भाषाविज्ञान, शब्दशास्त्र, भाषातत्त्व, भाषिकी आदि शब्द प्रयुक्त हो चुके हैं। आज हिंदी में भाषाविज्ञान, भाषाशास्त्र और भाषिकी ये तीन शब्द ही विशेष मान्य एवं उपयुक्त हैं। लेकिन इनमें से 'भाषाविज्ञान' नाम ही सर्वाधिक मान्य एवं प्रसिद्ध है। केंद्रीय सरकार (शिक्षा मंत्रालय, दिल्ली) के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के स्थायी आयोग ने मान्य किया हुआ प्रचलित नाम भाषाविज्ञान भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए उपयुक्त एवं उपादेय है।

♦ **विविध विद्वानों द्वारा की हुई परिभाषाएँ :**

भाषाविज्ञान के अर्थ एवं स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए हम भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं का अध्ययन करेंगे।

♦ **भारतीय विद्वान :**

प्राचीन भारत में संस्कृत साहित्य के अंतर्गत भाषाविज्ञान और व्याकरण के क्षेत्र में काफी गहराई के साथ अध्ययन हुआ है। संस्कृत साहित्य में भाषाविज्ञान की दो परिभाषाएँ मिलती हैं -

1. भाषाया यतु विज्ञानं, सर्वाङ्ग व्याकृतात्मकम्, विज्ञानं दृष्टिमूलं तद् भाषा विज्ञानमुच्यते।
अर्थात् भाषाविज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें भाषा का सर्वाङ्गीण विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है।
2. भाषायाः विज्ञानाम् भाषाविज्ञानम् विशिष्ट ज्ञानम् विज्ञानम्।
अर्थात् भाषा के विशिष्ट ज्ञान को भाषाविज्ञान कहते हैं।
हिंदी के अनेक विद्वानों ने भाषाविज्ञान को परिभाषा में बाँधने की कोशिश की है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

1. **डॉ. श्यामसुंदर दास :-**

भाषाविज्ञान उस शास्त्र को कहते हैं, जिसमें भाषा मात्र के भिन्न-भिन्न अंगों एवं स्वरूपों का विवेचन तथा निरूपण किया जाता है।

अर्थात् इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि डॉ. श्यामसुंदर दास ने भाषाविज्ञान को एक शास्त्र कहा है।

2) **डॉ बाबूराम सक्सेना:-**

भाषा तत्त्वों का अध्ययन भाषा विज्ञान का विषय है।

3) **डॉ. मंगलदेव शास्त्री:-**

भाषा विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं, जिसमें सामान्य रूप से मानवीय भाषा का, किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का, और अंततः भाषाओं, प्रादेशिक भाषाओं या बोलियों के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

4) डॉ. उदयनारायण तिवारी :-

भाषा विज्ञान को परिभाषित करते हुए कहते हैं, भाषा विज्ञान वह विज्ञान है जिसमें भाषा अथवा भाषाओं का एककालिक, बहुकालिक, तुलनात्मक अथवा अनु प्रायोगिक अध्ययन, विश्लेषण तथा तद् विषयक सिद्धांतों का निर्धारण किया जाता है।

5) डॉ. मनमोहन गौतम :-

भाषा विज्ञान वह शास्त्र है जिसमें ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा भाषा की उत्पत्ति, बनावट, प्रकृति, विकास एवं हास आदि की वैज्ञानिक व्याख्या की जाती है।

6) डॉ. देवीशंकर द्विवेदी :-

भाषा विज्ञान को अर्थात् भाषा के विज्ञान को 'भाषिकी' कहते हैं। उनके अनुसार भाषिकी में भाषा का वैज्ञानिक विवेचन किया जाता है।

7) डॉ. अंबाप्रसाद सुमन :-

भाषा विज्ञान वह विज्ञान है जिसमें भाषाओं का सामान्य रूप से या किसी एक भाषा का विशिष्ट रूप से प्रकृति, संरचना, इतिहास, तुलना, प्रयोग आदि की दृष्टि से सिद्धांत निश्चित करते हुए वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है।

8) राजेंद्र द्विवेदी :-

ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन के सहारे भाषा के जन्म, गठन, विकास, स्वरूप, अंग, परिवार आदि का विवेचन करनेवाले शास्त्र को भाषा विज्ञान कहते हैं।

9) डॉ. हरीश :-

भाषा विज्ञान भाषा मात्र के अध्ययन से संबंध एक गत्यात्मक अध्ययन है। भाषा तत्त्वों के विश्लेषण, संश्लेषण संबंधी देशकाल सापेक्ष व्यवस्थित अध्ययन के फल स्वरूप प्राप्त निष्कर्ष के माध्यम से भाषा मात्र के अनुशीलन एवं सिद्धांत निरूपण संबंधी अध्ययन को भाषा विज्ञान कहते हैं।

10) डॉ. तिलक सिंह :-

विज्ञान की वह शाखा जिसमें भाषा (उच्चरित) की उत्पत्ति, उसके गठन, उसके रूप, प्रकार्य, अंग तथा परिवर्तनों का समकालिक, ऐतिहासिक स्तर पर वस्तुनिष्ठ विश्लेषण विवेचन करके, विशिष्टता सामान्य नियम निर्धारित किए जाते हैं उसे भाषा विज्ञान कहते हैं।

11) भोलानाथ तिवारी:-

भाषा विज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें भाषा विशिष्ट, कई और सामान्य का समकालिक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक और प्रायोगिक दृष्टि से अध्ययन और तद्- विषयक सिद्धांतों का निर्धारण किया जाता है।

सर्व समावेशक परिभाषा

भाषा विज्ञान भाषा के उद्भव, संरचना, विकास आदि का वस्तुनिष्ठ, देशकाल सापेक्ष, विश्लेषण विवेचन है। वास्तव में भाषाविज्ञान भाषा की उत्पत्ति, प्रकृति और क्रियाशीलता का वैज्ञानिक अध्ययन है।

12. डॉ. उदयनारायण तिवारी :-

भाषा शास्त्र का विषय भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करना है। इस अध्ययन की सीमा के अंतर्गत मानव कंठ से निःसृत वाणी, प्राचीन तथा आर्वाचीन, संस्कृत एवं असंस्कृत, विद्वान एवं निरक्षर सभी के भाषा के रूपों का समावेश करती है।

पाश्चात्य विद्वान : परिभाषाएँ :-

- ♦ पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों ने भी भाषा का गहन अध्ययन किया है। इन वैज्ञानिकों ने भाषाविज्ञान के लिए अंग्रेजी के जिन शब्दों का प्रयोग किया है। उनमें दो शब्द सर्वाधिक प्रचलित और सर्वमान्य हैं, वे हैं Philology और Linguistics.
- ♦ अतः भाषाविज्ञान के संबंध में पाश्चात्य परिभाषाएँ देखते समय इन दो अंग्रेजी नामों के अर्थ को स्पष्ट करनेवाली परिभाषाओं पर विचार किया जाएगा।

1. ब्रिटेन का विश्व कोश

- ♦ The word philology is here, taken as meaning the science of language i.e. the study of the structure and development of languages, thus corresponding to linguistics.
- ♦ उपर्युक्त परिभाषा में भाषाविज्ञान के लिए Philology शब्द का प्रयोग किया गया है। इसे भाषा का विज्ञान कहा गया है, इसके अंतर्गत भाषाओं का अध्ययन उनकी रचना और विज्ञान की दृष्टि से किया जाता है। इस परिभाषा के अनुसार Philology का जो अर्थ है, वहीं अर्थ Linguistics शब्द का भी है।

2. ग्लीसन : (Geleason)

- ♦ Descriptive linguistics, the discipline which studies languages in terms of internal structure.
- ♦ इस परिभाषा में ग्लीसन ने उस विशेष को कहा है, जिसके अंतर्गत भाषाओं का डिस्क्रिप्टिव लिंग्विस्टिक्स अध्ययन करते समय उनकी आंतरिक संरचना को ध्यान में रखा जाता है।

3. व्हीटनी : (Whitney)

- ♦ 'भाषा अपनी संपूर्णता में भाषाविज्ञान के अध्ययन का विषय है। इसमें मानवीय वाणी के सभी संभव रूप आ जाते हैं, चाहे वह मनुष्य के मस्तिष्क या मुख में जीवित हो या दस्तावेजों में सुरक्षित अथवा ताम्रलेखों या शिलालेखों में सुरक्षित हो।'

4. ब्लूम फील्ड :

- ♦ Linguistics is a science which concerns with the scientific study of language in general as well as in particular.
- ♦ अर्थात् भाषाविज्ञान वह विज्ञान है, जो भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन सामान्य एवं विशेष रूप से करता

5 कार्ल वासलर :

- ♦ Linguistics means profound philosophy of language in general as well as in particular.
- ♦ वासलर ने शब्द और अर्थ तत्व पर बल देते हुए यह परिभाषा बनाई है।

6. Dictionary of Linguistics

- ♦ Linguistics - The science of language.
- ♦ भाषाविज्ञान भाषा का विज्ञान है।

7. ऑस्कर लुइस चावरिया :

- ♦ The general term linguistics includes in addition to descriptive linguistics historical and comparative study of language.
- ♦ अर्थात् 'भाषाविज्ञान में वर्णनात्मक भाषाविज्ञान के अतिरिक्त भाषा के ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक अध्ययन का समावेश होता है।'

8. हॉकेट :-

- ♦ भाषा के बारे में उपलब्ध व्यवस्थित ज्ञान को भाषाविज्ञान कहते हैं।
- ♦ उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भाषाविज्ञान की अनेक परिभाषाएँ विद्वानों ने प्रस्तुत की हैं। परिभाषाओं का अनुशीलन करने से स्पष्ट होता है कि,
 1. कुछ परिभाषाओं में भाषाविज्ञान के स्वरूप कथन पर बल दिया है।
 2. कुछ परिभाषाओं में भाषाविज्ञान के व्यापक अनुसंधानात्मक पक्ष पर बल दिया है।
 3. कुछ परिभाषाओं में भाषा अध्ययन की प्रणाली पर बल दिया है।
 4. कुछ परिभाषाओं में भाषाविज्ञान की विवेच्य सामग्री पर बल दिया है।
 5. कुछ परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि, भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन की दिशाएँ भिन्न हो सकती हैं किंतु वैज्ञानिक दृष्टिकोन होना आवश्यक है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर भाषाविज्ञान की सम्यक परिभाषा इस प्रकार हो सकती है- भाषाविज्ञान वह विज्ञान है, जो मानव भाषाओं का वैज्ञानिक रीति से सम्यक अध्ययन करता है। अर्थात् मानव भाषा के वैज्ञानिक, क्रमबद्ध एवं सुसंगठित अध्ययन को भाषाविज्ञान कहते हैं।

3.2 भाषाविज्ञान के अध्ययन का महत्व :

प्रत्येक वस्तु की अपनी उपयोगिता तथा अर्हता होती है। जो वस्तु जितनी ही उपयोगी होगी उससे मानव का उद्देश्य है। भाषाविज्ञान की उपयोगिता भी इस संबंध में उपेक्षणीय नहीं है। भाषाविज्ञान के अध्ययन का लाभ, तथा समाज का उतना ही कल्याण होगा। मानव जाति तथा संस्कृति की समृद्धि तथा कल्याण करना विज्ञान प्रयोजन एवं उपयोगिता क्या है? यह हम निम्नप्रकार स्पष्ट कर सकते हैं-

1. बौद्धिक जिज्ञासा की तृप्ति :

मानव विवेकप्रधान प्राणी है। भाषा तथा शब्द विषयक अनेक प्रश्न उसके मस्तिष्क में घूमते रहते हैं। उसका इस प्रकार का कौतुहल साहित्य तथा व्याकरण का अध्ययन करते समय अधिक बढ़ जाता है। भाषाविज्ञान इस कौतुहल तथा बौद्धिक जिज्ञासा को तृप्त करने की चेष्टा करता है और साथ ही भाषा संबंधी अनेक समस्याओं का समाधान उपस्थित करता है। भाषा की उत्पत्ति, उद्भव, विकास, प्रयोग आदि के बारे में हमारी जिज्ञासा भाषाविज्ञान शांत करता है।

2. विश्वबंधुत्व एवं एकता का विकास :

भाषाविज्ञान के अध्ययन से हमें ज्ञात होता है कि कोई भी भाषा श्रेष्ठ एवं हेय नहीं है। भाषा की उत्पत्ति तथा भाषा के विभिन्न परिवारों के अध्ययन से विश्वबंधुत्व की भावना वृद्धिगत होती है। भाषाविज्ञान पाठकों की दृष्टि को अधिक व्यापक और उदार बनाता है। यही कारण है कि यह अपने व्यापकत्व के कारण एक राष्ट्र की सीमित परिधि को लाँघकर विश्व-बंधुत्व तथा मानव मात्र की ऐक्य की भावना का विकास करता है। वह सभी भाषाओं के प्रति सम आदर तथा उदार दृष्टि रखता है। अंततः संसार की समस्त भाषाओं का समान रूप से अध्ययन करने से मानव मात्र में एकता की भावना बढ़ जाती है। साथ ही भाषाविज्ञान के अध्ययन से विश्व की भाषाओं के प्रति प्रेम, सम्मान की भावना निर्माण होती है।

3. भाषा की शुद्धता और प्रयोग का ज्ञान :

भाषा की शुद्धता का संबंध भाषाविज्ञान के अध्ययन से है। कौनसा वर्ण कहाँ से उच्चारित होगा? अर्थनिष्पत्ति के लिए शब्दों का प्रयोग कैसे किया जाएगा? यह सारी जानकारी भाषाविज्ञान हमें देता है। भाषा और लिपि को अधिक शुद्ध और व्यापक बनाने में इसका अध्ययन अत्यंत उपयोगी है। भाषाविज्ञान भाषा संबंधी समस्याओं का समाधान करता है। दोषों का परिहार तथा गुणों की वृद्धि करके यह भाषा को अधिक समुन्नत और समृद्ध बनाता है। भाषा, ध्वनि और अर्थ के परिवर्तन के कारणों की खोज करता है।

4. भाषा का सम्यक ज्ञान :

मनुष्य भाषा का जितना उपयोग करता है उतना और किसी दूसरी चीज का नहीं। जिस भाषा से इतना काम लिया जाता है उसका ज्ञान और सम्यक ज्ञान भी आवश्यक है। भाषा की व्युत्पत्ति से विकास तक, संरचना से प्रेरणा तक, सूचना से चिंतन तक का ज्ञान भाषाविज्ञान कराता है। भाषाविज्ञान भाषा का संपूर्ण ज्ञान कराता है। भाषाविज्ञान, व्याकरण और साहित्य का चिर संबंध है। भाषाविज्ञान के क्षेत्र में शाब्दिक तथा साहित्यिक अध्ययन में हमें किसी विशेष जाति या मानव समाज के मानसिक स्तर का परिचय मिलता है और उस विचारधारा के विकास से हम अवगत हो जाते हैं। प्रत्येक जाति की विचार अभिव्यक्ति का साधन भाषा है। भाषा का सम्यक अध्ययन भाषाविज्ञान करता है।

5. समाज और संस्कृति के अन्वेषण में सहायक :

भाषाविज्ञान से हम मानव जाति के अतीत तक पहुँच जाते हैं। प्राचीनता की खोज मनुष्य का स्वभाव है। प्राचीन वस्तुएँ प्रायः अतीत के अंधकार में होती हैं। इसी प्राचीन भाषा के अध्ययन से प्राचीन संस्कृति का भी पता लगता है। किसी भी देश की संस्कृति के ज्ञान का आधार उस देश की भाषा होती है। जैसे वैदिक भाषा

से भारत की वेदकालीन संस्कृति का ज्ञान होता है। उसी तरह लौकिक संस्कृत से तत्कालीन सभ्यता एवं संस्कृति का ज्ञान होता है। जिस भाषा से समाज के स्तर और संस्कृति का ज्ञान प्राप्त होता है, उस भाषा को जानने का आधार भाषाविज्ञान है।

6. अन्य ज्ञान-विज्ञानों का सहायक :

भाषाविज्ञान का क्षेत्र अत्यंत विशाल और विस्तृत है। वह किसी भाषा के बंधन को स्वीकार नहीं करता। विश्व की सभी भाषाओं को भाषाविज्ञान ने अपने विराट रूप में समाहित कर लिया है। साथ ही इसका संबंध अनेक शास्त्रों तथा विज्ञानों से है। इतिहास, मनोविज्ञान, पुरातत्व, समाजशास्त्र आदि को भाषाविज्ञान तर्कसंगत बना देता है।

इसके साथ ही भाषाविज्ञान व्याकरण का पथ-प्रदर्शक है। इतिहास की तिथियाँ निश्चित करने के लिए भाषाविज्ञान की ऐतिहासिक भाषाविज्ञान नामक शाखा मदद करती है।

किसी स्थान की भौगोलिक परिस्थिति का अध्ययन भाषाविज्ञान की सहायता से किया जाता है। भूगोल-वेत्ता भाषाविज्ञान की जानकारी से भाषा में प्रयुक्त शब्दों के आधार पर अपने निष्कर्ष निकाल सकता है। भाषाविज्ञान की सहायता से ताम्रपत्रों, शिलालेखों एवं पांडुलिपियों का अर्थ समझा जाता है। मनोरूपाओं की मनोवैज्ञानिक चिकित्सा में भाषाविज्ञान की पर्याप्त सहायता होती है। भाषाविज्ञान और मनोविज्ञान की परस्पर

उपयोगिता के कारण भाषाविज्ञान की नई शाखा 'मनोभाषाविज्ञान' अस्तित्व में आ गई है। सामाजिक स्थिति, सभ्यता, परंपरा आदि पर प्रकाश डालने का काम भाषाविज्ञान करता है। प्रांतीय भाषा निश्चित करने, राज्यभाषा नीति अपनाने, सीमावर्ती क्षेत्रों की भाषा निश्चित करने के लिए भाषावैज्ञानिक राजनीति में काफी सहायता कर सकते हैं। आज सूचना प्राद्यौगिकी के युग में भाषाविज्ञान का विस्तृत आयाम खुल गया है। अतः उपर्युक्त ज्ञान-विज्ञान की सहायता से भाषाविज्ञान मनुष्य के ज्ञान की वृद्धि करता है।

7. प्रागैतिहासिक एवं ऐतिहासिक अनुसंधान में योग :

प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृतियों के ज्ञान के लिए मनुष्य हमेशा से ही प्रयासरत है। मानवीय सभ्यता के अतीत को जानने का कौतुहल उसके मन में है। हम भाषाविज्ञान के अध्ययन से अज्ञात तथा अंधकारमय अतीत के अंतःस्थल में प्रवेश कर मानवीय संस्कृति और सभ्यता के रहस्य और भेदों का अनावरण कर देते हैं। जिस युग का इतिहास इतिहास को भी ज्ञात नहीं, भाषाविज्ञान उस काल का इतिहास लिखने में समर्थ है। प्राचीन काल की मुद्राओं पर अंकित अक्षर, शिलालेख, ताम्र-पट का विश्लेषण भाषावैज्ञानिक ही कर सकता है।

8. अनुवाद में सहायक :

अनुवाद मतलब केवल एक भाषा के शब्द (स्रोत भाषा) के लिए दूसरी भाषा का (लक्ष्य भाषा) शब्द रखना नहीं बल्कि एक भाषा की वैचारिक निधि को दूसरी भाषा में यथावत रखने का प्रयास है। अनुवाद प्रायोगिक भाषाविज्ञान के अंतर्गत आता है। अनुवाद का कार्य समुचित ढंग से होने के लिए भाषाविज्ञान सहायता करता है। भाषा विज्ञान के पास दुनिया की किसी भी भाषा का संरचनात्मक अध्ययन उपलब्ध होता है। भाषाविज्ञान से किसी भी भाषा की रचना का सूक्ष्म अध्ययन कर उच्च कोटि का तथा सटीक अनुवाद किया जा सकता है।

9. कृत्रिम भाषा के विकास में सहायक :-

विश्व के लिए एक सामान्य भाषा का विकास तथा निश्चय करने में भाषाविज्ञान का अध्ययन परम उपयोगी है। पूरे विश्व में वैचारिक आदान-प्रदान के लिए एक ही भाषा का सृजन भाषाविज्ञान कर रहा है। जैसे, 'एस्पैरंतो' भाषा। इस भाषा के जनक जमेनहाफ हैं करीब ५०,००० से अधिक पुस्तकें इस भाषा में प्रकाशित हुई हैं। यूरोप में अनेक विश्वविद्यालयों में इसका अध्ययन हो रहा है। साथ ही इसी भाषा में यूरोप के बाईस रेडिओ स्टेशनों पर समाचार प्रसारित होते हैं।

10. तुलनात्मक अध्ययन में सहायक :-

भाषाविज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर तुलनात्मक विज्ञान की अनेक शाखाओं की उत्पत्ति हुई है। जैसे, तुलनात्मक नीति और धर्मविज्ञान। अनेक जातियों के धर्म तथा मतों का तुलनात्मक अध्ययन आदि।

11. लिपि के निर्माण तथा सुधार में सहायक :-

भाषा और लिपि को अधिक शुद्ध और व्यापक बनाने में भाषाविज्ञान का अध्ययन अत्यंत उपयोगी है। भाषाविज्ञान भाषा संबंधी समस्याओं का समाधान करता है। दोषों का परिहार तथा गुणों की वृद्धि करके यह भाषा और लिपि को अधिक समुन्नत और समृद्ध बनाता है। भाषा, ध्वनि और अर्थ परिवर्तन के कारणों की खोज करता है।

12. वाक्-चिकित्सा के लिए आवश्यक :-

ध्वनियों के उच्चारण में गलतियाँ क्यों होती हैं? उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है? आदि उच्चारण विषयक दोषों का निराकरण भाषाविज्ञान में किया जाता है। कुछ लोग तुललाहट, हकलाहट के कारण अशुद्ध उच्चारण करते हैं। उन्हें अपने भाव व्यक्त करने में मुसीबत होती है। ऐसे लोगों की चिकित्सा में भाषाविज्ञान सहायता करता है।

स्वरयंत्र, स्वर-तंत्री, नासिका विवर, तालु, दाँत, जीभ, कंठ, होंठ आदि में उत्पन्न दोषों के कारण मनुष्य तुतलाता है। इन सब दोषों की चिकित्सा का अध्ययन भाषाविज्ञान में किया जाता है। इसका उपयोग मनुष्य के बोलने, सुनने संबंधी दोषों का निराकरण करने के लिए किया जाता है।

13. पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण और भाषा के मानकीकरण में उपयोग :-

भाषा का विकास और अभिव्यंजना में वृद्धि के लिए भाषाविज्ञान का योगदान सराहनीय है। पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में भाषाविज्ञान मूलभूत सामग्री देता है। संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी भाषा के शब्दों में प्रत्यय जोड़कर भाषाविज्ञान की सहायता से पारिभाषिक शब्द गढ़े हैं। क्रमिक पुस्तकों के निर्माण में भाषाविज्ञान मूलभूत सामग्री देता है। भाषा के रूप को संमत बनाने का काम भाषाविज्ञान करता है। एकाध शब्द कहाँ से आया? वह कितना प्राचीन है आदि का गहराई में जाकर पता लगाने का काम भाषाविज्ञान करता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भाषाविज्ञान का सम्यक् अध्ययन करने के पश्चात मानव-समाज एवं संसार लाभान्वित हो सकता है। भाषाविज्ञान अत्यंत उपयोगी एवं समाज कल्याणपरक होता है। संसार की समृद्धि के लिए भाषाविज्ञान अत्यंत उपयोगी एवं कल्याणकारी विषय है। भाषाविज्ञान का अध्ययन हमारे लिए उतना उपयोगी है, जितना किसी भी अन्य शास्त्र का। जीवन के सभी अंगों से भाषाविज्ञान जुड़ चुका है।

3.3. मानक वर्तनी के नियम :

किसी भाषा की एकरूपता को बनाए रखने के लिए तथा जन प्रयोगों द्वारा होनेवाली विकृतियों से उसे बचाए रखने के लिए वर्तनी संबंधी नियमों का पालन करना आवश्यक है।

‘वर्तनी’ संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है ‘शब्द के वर्ण, उन का क्रम तथा उच्चारण विधि।’

शब्दों के शुद्ध-अशुद्ध लिखने की रीति को वर्तनी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे स्पेलिंग (spelling) उर्दू में हिज्जज और बंगला में बनाना कहते हैं। हिंदी में इसे ‘अक्षरी’ भी कहते हैं। भाषा के गठन में उसकी वर्तनी (spelling) का काफी महत्व होता है और किसी भाषा को मूर्त करने के लिए जिस प्रकार लिपि की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार उसकी सार्थक रूप में अभिव्यक्ति देने में वर्तनी का बहुत बड़ा योगदान होता है। किसी भी भाषा की समस्त ध्वनियों के सही उच्चारण के लिए उसकी वर्तनी में एकरूपता का होना आवश्यक होता है। वर्तनी की विविधता के कारण भ्रम पैदा होते हैं। कई बार वर्तनी की अशुद्धि के कारण अर्थ के स्थान पर अनर्थ हो जाता है।

‘वर्तनी’ की अव्यवस्था के कारण भाषा लेखन में कई प्रकार की उलझनें पैदा होती हैं। इन सभी कठिनाइयों को दूर करने के लिए और हिंदी वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने सन् 1961 में एक विशेषज्ञ समिती की नियुक्ति की थी। इस समिती ने अप्रैल, 1962 में अपनी अंतिम शिफारिशें प्रस्तुत की। जिन्हें सरकार ने स्वीकृति दी, उन्हें सन 1967 में ‘हिंदी वर्तनी का मानकीकरण’ शीर्षक पुस्तिका में व्याख्या तथा उदाहरण सहित प्रकाशित किया गया। भारत सरकार द्वारा निर्धारित हिंदी भाषा की वर्तनी संबंधी अद्यतन नियम इस प्रकार हैं-

1) संयुक्त वर्ण :

क) खड़ी पाईवाले व्यंजन

- ♦ खड़ी पाईवाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाना चाहिए।
- ♦ जैसे - ख्याति, लग्न, विघ्न, कच्चा, छज्जा, नगण्य, कुत्ता, पथ्य, ध्वनि, न्यास, प्यास, डिब्बा, सभ्य, रम्य, शय्या, उल्लेख, ण्यास, राष्ट्रीय, स्वीकृति, यक्ष्मा, त्र्यंबक आदि।

ख) अन्य व्यंजन

(अ) ‘क’ और ‘फ’ के संयुक्ताक्षर :

संयुक्त, पक्का, दफ्तर आदि की तरह बनाएँ जाएँ, न कि संयुक्त, पक्का की तरह या न कि संयुक्त, पक्का, दफ्तर की तरह।

(आ) ड, छ, ट, ठ, ड, ढ, द और ह के संयुक्ताक्षर हल चिह्न लगाकर ही बनाए जाएँ; जैसे वाङ्मय, लट्ठ, बुद्धा, विद्या, चिह्न, ब्रह्मा आदि।

(इ) संयुक्त ‘र’ के तीनों रूप यथावत रहेंगे;

जैसे- प्रकार, धर्म, राष्ट्र आदि।

- (ई) 'श्र' का प्रचलित रूप ही मान्य होगा। इसे 'श्र' के रूप में नहीं लिखा जाएगा। त्+र के संयुक्त रूप के लिए व्र और त्र दोनों रूपों में से किसी एक के प्रयोग की छूट होगी किंतु 'ऋ' को 'ऋ' के रूप में नहीं लिखा जाएगा।
- (उ) हल् चिह्न युक्त वर्ण से बनने वाले संयुक्ताक्षर के द्वितीय व्यंजन के साथ 'इ' की मात्रा का प्रयोग संबंधित व्यंजन के तत्काल पूर्व ही किया जाएगा, न कि पूरे युग्म के पूर्व;
जैसे- कुट्टिम, द्वितीय, बुद्धिमान, चिह्नित आदि। (कुटिट्म, द्वितीय, बुद्धिमान, चिन्हित नहीं)
- (ऊ) संस्कृत में संयुक्ताक्षर, पुरानी शैली से भी लिखे जा सकेंगे; जैसे- संयुक्त, चिह्न, विद्या, चञ्चल, विद्वान, बुद्ध, अङ्क, द्वितीय, बुद्धि आदि।

2) विभक्ति-चिह्न :

- क) हिंदी के विभक्ति-चिह्न सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों में प्रातिपदिक से पृथक् लिखे जाएँ; जैसे- राम ने, राम को, राम से, आदि तथा स्त्री ने स्त्री को, स्त्री से आदि। सर्वनाम शब्दों में ये चिह्न प्रातिपदिक के साथ मिलकर लिखे जाएँ; जैसे उसके, उसको, उससे, उसपर आदि।
- ख) सर्वनामों के साथ यदि दो विभक्ति-चिह्न हों तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा पृथक् लिखा जाए; जैसे- उसके लिए, उसमें से।
- ग) सर्वनाम और विभक्ति के बीच 'ही', 'तक' आदि का निपात हो तो विभक्ति को पृथक् लिखा जाए; जैसे- आप ही के लिए, मुझ तक को।

३) क्रियापद :

संयुक्त क्रियाओं में सभी अंगभूत क्रियाएँ पृथक् पृथक् लिखी जाएँ; जैसे-पढ़ा करता है, आ सकता है, जाया करता है, खाया करता है, जा सकता है, कर सकता है, किया करता था, पढ़ा करता था, खेला करेगा, घूमता रहेगा, बढ़ते चले जा रहे हैं आदि।

४) हाइफ़न :

हाइफ़न का विधान स्पष्टता के लिए किया गया है। अर्थात् शब्दों-शब्दों में स्पष्टता के लिए हाइफ़न का विधान किया गया है।

- क) द्वंद्व समास में पदों के बीच हाइफ़न रखा जाए; जैसे राम-लक्ष्मण, शिव-पार्वती-संवाद, देख-रेख, चाल-चलन, हँसी-मजाक, लेन-देन, पढ़ना-लिखना, खाना-पिना, खेलना-कूदना आदि।
- ख) सा, जैसा आदि के पूर्व हाइफ़न रखा जाए; जैसे तुम-सा, राम-जैसा, चाकू से तीखे।
- ग) तत्पुरुष समास में हाइफ़न का प्रयोग केवल वहीं किया जाए, जहाँ उसके बिना भ्रम होने की संभावना हो, अन्यथा नहीं; जैसे- भू-तत्त्व। सामान्यतः तत्पुरुष समासों में हाइफ़न लगाने की आवश्यकता नहीं है; जैसे- रामराज्य, राजकुमार, गंगाजल, ग्रामवासी, आत्महत्या आदि।

इसी तरह, अ-नख (बिना नख का) समस्त पद में हाइफन न लगाया जाए तो उसे 'अनख' पढ़े जाने से 'क्रोध' का अर्थ भी निकल सकता है। अ-नति (नम्रता का अभाव) अर्नात (थोड़ा), अ-परस (जिसे किसी ने न छुआ हो) अपरस (एक चर्म रोग), भूतत्त्व (भूत होने का भाव) आदि भू-तत्त्व (पृथ्वीतत्त्व) आदि। समस्त पदों की भी यही स्थिति है। ये सभी युग्म वर्तनी और अर्थ दोनों दृष्टियों से भिन्न-भिन्न शब्द हैं।

घ) कठिन संधियों से बचने के लिए भी हाइफन का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे-द्वि-अक्षर, द्वि-अर्थक, द्वि-दिवसीय, आदि। इसे, इस प्रकार से भी लिखा जा सकता है; जैसे द्वि-अक्षर, द्वि-अर्थक, द्वि-दिवसीय आदि।

5) अव्यय :

'तक', 'साथ' आदि अव्यय सदा पृथक् लिखे जाएँ; जैसे आपके साथ, यहाँ तक। इस नियम को कुछ और उदाहरण देकर स्पष्ट करना आवश्यक है। हिंदी में आह, ओह, ऐ, ही, तो, सो, भी, न, जब, तब, कब, यहाँ, वहाँ, कहाँ, सदा, क्या, श्री, जी, तक, भर, मात्र साथ, कि, किंतु, मगर, लेकिन, चाहे, या, अथवा, तथा, यथा, और आदि अनेक प्रकार के भावों का बोध करानेवाले अव्यय हैं।

क) कुछ अव्ययों के आगे विभक्ति चिह्न भी आते हैं; जैसे अब से, तब से, यहाँ से, वहाँ से, सदा से आदि।

ख) नियम के अनुसार अव्यय सदा पृथक् लिखे जाने चाहिए; जैसे आप ही के लिए, मुझ तक को, आपके साथ, गज भर कपड़ा, देश भर, रात भर, दिन भर, वह इतना भर कर दे, मुझे जाने तो दो, काम भी नहीं बना, पचास रुपए मात्र आदि।

ग) सम्मानार्थक 'श्री' और 'जी' अव्यय भी पृथक् लिखे जाएँ; जैसे-श्री श्रीराम कन्हैयालाल जी, महात्मा जी आदि।

घ) समस्त पदों में प्रति, मात्र, यथा आदि अव्यय पृथक् नहीं लिखे जाएँगे; जैसे प्रतिदिन, प्रतिशत, मानवमात्र, निमित्तमात्र, यथासमय, यथोचित आदि।

च) यह सर्वविदित नियम है कि समास होने पर समस्त पद एक माना जाता है। अतः उसे व्यस्त रूप में न लिखकर एक साथ लिखना ही संगत है। जैसे-रामराज्य, राजकुमार, गंगाजल, ग्रामवासी, आत्महत्या आदि।

६) श्रुतिमूलक 'य', 'व' :

हिंदी में 'य' एवं 'व' को श्रुतिमूलक माना गया है। इसके प्रयोग के बारे में निम्नलिखित नियम है -

क) जहाँ श्रुतिमूलक 'य', 'व' का प्रयोग विकल्प से होता है, वहाँ इसका प्रयोग न किया जाए अर्थात् किए-किये, नई-नयी, हुआ-हुवा आदि में से पहले (स्वरात्मक) रूपों का ही प्रयोग किया जाए। दूसरे शब्दों में कहा जाता है जहाँ-श्रुतिमूलक 'य' तथा 'व' का प्रयोग विकल्प से होता है, वहाँ इसका प्रयोग न किया जाए अर्थात् किए', 'नई', 'हुआ', आदि रूपों का ही प्रयोग किया जाए। न कि 'किये, 'नयी', 'हुवा' आदि का।

यह नियम क्रिया विशेषण अव्यय आदि सभी रूपों और स्थितियों में लागू माना जाए; जैसे-दिखाए गए, राम के लिए, पुस्तक के लिए, हुए, नई दिल्ली आदि।

ख) जहाँ, 'या' श्रुतिमूलक व्याकरणिक परिवर्तन न होकर शब्द का ही मूलतत्त्व हो, वहाँ वैकल्पिक श्रुतिमूलक स्वरात्मक परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है; जैसे स्थायी, अव्ययीभाव, दायित्व आदि। यहाँ स्थाई, अव्ययी भाव, दाइत्व नहीं लिखा जाएगा।

७) अनुस्वार तथा अनुनासिकता-चिह्न (चंद्र बिंदु) :

मानक हिंदी प्रणाली में अनुस्वार (।) तथा अनुनासिकता अर्थात् चंद्र बिंदु (ँ) दोनों प्रचलित रहेंगे।

क) संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचमाक्षर के बाद (पंचम अक्षर) सवर्गीय शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो तो, एकरूपता और मुद्रण लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग करना चाहिए; जैसे-गंगा, चंचल, ठंडा संध्या, संपादक आदि में पंचमाक्षर के बाद उसी वर्ण का वर्ण आगे आता है, अतः पंचमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग होगा। (गङ्गा, चञ्चल, ठण्डा, सन्ध्या सम्पादक आदि रूपों का नहीं।

ख) यदि पंचमाक्षर के बाद किसी अन्य वर्ण का कोई वर्ण आए अथवा वही पंचमाक्षर दुबारा आए तो पंचमाक्षर अनुस्वार के रूप में परिवर्तित नहीं होगा; जैसे वाङ्मय, अन्न, सम्मेलन, सम्मति, चिन्मय, उन्मुख आदि। अतः इन शब्दों को वाङ्मय, अंध, अनं, संमेलन, संमति, चिंमय, उंमुख, आदि रूप ग्राह्य नहीं हैं। अतः इसे ऊपर जैसा कदापि नहीं लिखा जाना चाहिए।

ग) चंद्र बिंदु या अनुनासिकता-चिह्न (ँ) के बिना प्रायः अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है; हंस-हँस, अंगना-अँगना आदि में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए, चंद्र बिंदु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। किंतु जहाँ (विशेषकर शिरोरेखा के ऊपर जुड़ने वाली मात्रा के साथ) चंद्र बिंदु के प्रयोग से छपाई आदि में बहुत कठिनाई हो और चंद्र बिंदु के स्थान पर बिंदु (अनुस्वार चिह्न) का प्रयोग किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न करें, वहाँ चंद्र बिंदु के स्थान पर बिंदु के प्रयोग की छूट दी जा सकती है; जैसे नहीं, मैं, में आदि। किंतु जहाँ चंद्रबिंदु का प्रयोग अत्यावश्यक हो, वहाँ चंद्र बिंदु का यथा स्थान सर्वत्र प्रयोग किया जाना चाहिए।

कविता आदि के प्रसंग में छंद की दृष्टि से चंद्र बिंदु का यथास्थान अवश्य प्रयोग किया जाए। इसी प्रकार छोटे बच्चों की प्रवेशिकाओं में जहाँ चंद्रबिंदु का उच्चारण सिखाना अभीष्ट हो, वहाँ उसका यथास्थान सर्वत्र प्रयोग किया जाए; जैसे-कहाँ, हँसना, आँगन, सँवारना, आँचल आदि।

८) विदेशी ध्वनियाँ :

हिंदी भाषा में अरबी, फारसी और अंग्रेजी आदि विदेशी भाषा के शब्द आ गए हैं, जो हिंदी भाषा के अंग बन चुके हैं।

क) हिंदी भाषा में अरबी-फारसी या अंग्रेजी मूलक वे शब्द जो हिंदी के अंग बन चुके हैं और जिनकी विदेशी ध्वनियों का हिंदी ध्वनियों में रूपांतर हो चुका है, हिंदी रूप में ही स्वीकार किए जा सकते हैं; जैसे-कलम, किला, दाग आदि। (कलम, किला, द्राग नहीं) पर जहाँ उनका शुद्ध विदेशी रूप में प्रयोग अभीष्ट हो अथवा उच्चारणगत भेद बताना आवश्यक हो, वहाँ उनके हिंदी में प्रचलित रूपों में यथास्थान नक्ते लगाए जाएँ: जैसे खाना खाना, राज-राज़, हाइफन-हाइफ़न । सारांश रूप में कहा जा सकता है कि अरबी-फारसी एवं अंग्रेजी की मुख्यतः पाँच ध्वनियाँ (क़, ख, ग, ज़ और फ़) हिंदी में आई हैं, जिनमें से दो (क़ और ग)

तो हिंदी उच्चारण (क, ग) में परिवर्तित हो गई हैं, एक (ख) लगभग हिंदी 'ख' में खपने की प्रक्रिया में है और शेष दो (ज़, फ़) धीरे-धीरे अपना अस्तित्व खोने, बनाए रखने के लिए संघर्षरत हैं।

ख) अंग्रेजी के जिन शब्दों में अर्धविवृत 'ओ' ध्वनि का प्रयोग होता है, उसके शुद्ध रूप का हिंदी में प्रयोग अभीष्ट होने पर 'आ' की मात्रा (1) के ऊपर अर्धचंद्र का प्रयोग किया जाए। (ऑ, 1)। जहाँ तक अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं से नए शब्द ग्रहण करने और उनके देवनागरी लिप्यंतरण का संबंध है, अगस्त-सितंबर, 1962 में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा वैज्ञानिक शब्दावली पर आयोजित भाषाविदों की संगोष्ठी में अंतरराष्ट्रीय शब्दावली के देवनागरी लिप्यंतरण के संबंध में की गई सिफरीश उल्लेखनीय है। उसमें यह कहा गया है कि अंग्रेजी शब्दों का देवनागरी लिप्यंतरण इतना क्लिष्ट नहीं होना चाहिए कि उसके लिए वर्तमान देवनागरी वर्णों में अनेक नए संकेत-चिह्न लगाने पड़े। अंग्रेजी शब्दों का देवनागरी लिप्यंतरण मानक अंग्रेजी उच्चारण के अधिक-से-अधिक निकट होना चाहिए। उसमें भारतीय शिक्षित समाज में प्रचलित उच्चारण संबंधी थोड़े-बहुत परिवर्तन किए जा सकते हैं। अन्य भाषाओं के शब्दों के संबंध में भी यही नियम लागू होने चाहिए।

ग) हिंदी में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके दो-दो रूप बराबर चल रहे हैं। विद्वत् समाज में दोनों रूपों की एक-सी मान्यता है। फ़िलहाल इनकी एकरूपता आवश्यक नहीं समझी गई है। नीचे कुछ उदाहरण दिए हैं-
गरदन/गर्दन, गरमी/गर्मी, बरफ/बर्फ, बिलकुल / बिल्कुल, सरदी/सर्दी, कुरसी/कुर्सी, भरती/भर्ती, फुरसत /फुर्सत, बरदाश्त/बर्दाश्त, वापिस / वापस, आखीर/आखिर, बरतन/बर्तन, दोबारा /दुबारा, दूकान/दुकान, बीमारी /बिमारी आदि।

9) हल् चिह्न :

संस्कृतमूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी में सामान्यतः संस्कृत रूप ही रखा जाए, परंतु जिन शब्दों के प्रयोग में हिंदी में हल् चिह्न लुप्त हो चुका है, उनमें उसको फिर से लगाने का प्रयत्न न किया जाए; जैसे- 'महान', 'विद्वान' आदि के 'न' में।

10) स्वन-परिवर्तन :

क) संस्कृत मूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी को ज्यों-का-त्यों ग्रहण किया जाए। अतः 'ब्रह्मा' को 'ब्रम्हा' 'चिह्न' को 'चिन्ह', 'उक्लण' को 'उरिण', 'ऋण' को 'रिण' में बदलना उचित नहीं होगा। इसी प्रकार ग्रहीत, दृष्टव्य, प्रदर्शिनी, अत्यधिक, अनधिकार ही लिखना चाहिए।

ख) जिन तत्सम शब्दों में तीन व्यंजनों के संयोग की स्थिति में एक द्वित्वमूलक व्यंजन लुप्त हो गया है, उसे न लिखने की छूट है; जैसे अर्ध/अर्ध, उज्ज्वल/उज्ज्वल, तत्त्व/तत्त्व आदि।

11) विसर्ग :

संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, वे यदि तत्सम रूप में प्रयुक्त हो, तो विसर्ग का प्रयोग अवश्य किया जाए; जैसे- 'दुःखानुभूति' ।

यदि उस शब्द के तद्भव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो, तो उस रूप में विसर्ग के बिना भी काम चल जाएगा; जैसे- 'दुख-सुख के साथी'।

12) 'ऐ', 'औ' का प्रयोग

हिंदी में 'ऐ' (*), और (१) का प्रयोग दो प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है; जैसे, 'गवैया' 'कौवा' आदि। इन दोनों प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए इन्हीं चिह्नों (ऐ, ; औ, है) का प्रयोग किया जाए। 'गवय्या', 'कव्वा' आदि संशोधनों की आवश्यकता नहीं हैं।

13) पूर्वकालिक प्रत्यय :

पूर्वकालिक प्रत्यय 'कर' क्रिया से मिलाकर लिखा जाए; जैसे-मिलाकर, खा-पीकर, रो-रोकर, खुलकर, दिलाकर, भुलाकर आदि।

14) विराम चिह्न :

पूर्ण विराम को छोड़कर हिंदी लेखन में भी सभी विराम आदि चिह्नों का प्रयोग किया जाना चाहिए; जो अंग्रेजी (या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर) में प्रचलित हैं। जैसे; . ?!, (),,,: , , ओ, -, , :-, =, -o-, हिंदी में पूर्णविराम के लिए खड़ी पाई (।) का प्रयोग किया जाना चाहिए। तथा विसर्ग के चिह्न को ही 'कोलन' का चिह्न (:) मान लिया जाए।

15) शिरोरेखा :

देवनागरी लिपि की लेखन-प्रणाली में शिरोरेखा के संबंध में काफी विवाद है। किंतु फिलहाल उनके लेखन में शिरोरेखा का प्रयोग प्रचलित रहेगा।

4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

अ) निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पर्यायों में से उचित पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1. भाषाविज्ञान व्याकरण का है।

क) विज्ञान

ख) प्रकार

ग) अंग

घ) व्याकरण

2. भाषाविज्ञान के अंतर्गत भाषा का अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है।

क) वैज्ञानिक

ख) भौगोलिक

ग) सामूहिक

घ) ऐतिहासिक

3. लिंग्विस्टिक्स भाषा का शब्द है।

क) अंग्रेजी

ख) ईरानी

ग) जापानी

घ) लैटिन

4. भाषाविज्ञान भाषा का अध्ययन करता है।

क) प्रायोगिक

ख) वैज्ञानिक

ग) ऐतिहासिक

घ) मानक

5. को भाषाविज्ञान का जनक माना जाता है।
 क) श्रेक्स ख) ब्लूम फील्ड
 ग) सर विलियम जोन्स घ) चोम्स्की
6. वर्तमान भाषाविज्ञान का आरंभ ई में माना जाता है।
 क) 1678 ख) 1786
 ग) 1886 घ) 1986
7. ई में भाषाविज्ञान परिषद का प्रथम अधिवेशन हुआ था।
 क) 1928 ख) 1972
 ग) 1828 घ) 1786
8. 'विज्ञान' का अर्थ है ज्ञान।
 क) विशिष्ट ज्ञान ख) भौतिक
 ग) रासायनिक घ) हिंदी
9. भाषाविज्ञान का प्रारंभिक नाम था।
 क) व्याकरण ख) ध्वनिविज्ञान
 ग) भाषाशास्त्र घ) तुलनात्मक व्याकरण
10. भाषाविज्ञान का सबसे बड़ा योगदान को है।
 क) राजनीति ख) भूगोल
 ग) इतिहास घ) समाज विज्ञान
11. लैटिन शब्द 'Lingua' का अर्थ है
 क) भाषा ख) जिह्वा
 ग) प्रयोग घ) ज्ञान
12. परिषद के पश्चात विभिन्न देशों में भाषाविज्ञान के केंद्र स्थापित हुए।
 क) दोन ख) पाँच
 ग) चार घ) दस
13. वैदिक भाषा से भारत की संस्कृति का ज्ञान होता है।
 क) हडप्पा ख) पुरातत्व
 ग) वेदकालीन घ) मध्यकालीन

14. इतिहास में भाषाविज्ञान की शाखा मदद करती है।
क) मनोविज्ञान भाषाविज्ञान ख) राजनीति भाषा विज्ञान
ग) ऐतिहासिक भाषाविज्ञान घ) तुलनात्मक भाषाविज्ञान
15. मनोवैज्ञानिक चिकित्सा में भाषाविज्ञान मदद करता है।
क) प्राकृतिक ख) मानविकी
ग) मनोभाषा घ) भौगोलिक
16. अनुवाद भाषाविज्ञान के अंतर्गत आता है।
क) वर्णनात्मक ख) विवरणात्मक
ग) विश्लेषणात्मक घ) प्रायोगिक
17. विश्वबंधुत्व की भावना का विकास के अध्ययन से होता है।
क) विशेष भाषा ख) बोली
ग) भाषाविज्ञान घ) अर्थविज्ञान
18. आंतराष्ट्रीय कृत्रिम भाषा है।
क) लैटिन ख) एस्पेरैंतो
ग) हिंग्लीश घ) ईरानी
19. एस्पेरैंतो में करीब से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।
क) 50,000 ख) 5000
ग) 500 घ) 50
20. अवतरण चिह्न प्रकार के होते हैं।
क) दो ख) चार
ग) छह घ) आठ
21. 'वर्तनी' भाषा का शब्द है।
क) बंगला ख) अंग्रेजी
ग) संस्कृत घ) उर्दू

22. भाषा के गठन में उसकी का काफी महत्व होता है।
 क) वर्तनी ख) शैली
 ग) धारावाहिकता घ) गतिशीलता
23. हिंदी वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए भारत सरकार के शिक्षामंत्रालय ने सन में एक विशेषज्ञ समिती नियुक्त की थी।
 क) 1957 ख) 1961
 ग) 1964 घ) 1966
24. हिंदी में वर्तनी के लिए कहते हैं।
 क) अक्षरी ख) स्पेलिंग
 ग) हिज्जे घ) बनाना
25. हाइफ़न का विधान के लिए किया गया है।
 क) अर्धविराम ख) स्पष्टता
 ग) कठिनता घ) सरलता
26. हिंदी में के लिए खड़ीपाई का प्रयोग किया जाता है।
 क) अर्धविराम ख) अल्पविराम
 ग) पूर्णविराम घ) उद्गार चिह्न

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए।

1. विज्ञान क्या है?
2. लिंग्वेस्टिक (Linguistic) शब्द की व्युत्पत्ति कौन से शब्द से हुई है?
3. भाषाविज्ञान को सर्वप्रथम कौनसा नाम दिया गया था?
4. भाषाविज्ञान के जनक कौन हैं?
5. भाषाविज्ञान का प्रथम अधिवेशन कब और कहाँ हुआ था ?
6. भाषाविज्ञान के दो पर्यायवाची नाम बताइए?
7. रॉयल एशियाटिक सोसायटी के सदस्यों के सामने सर विलियम जोन्स ने कौनसा मत व्यक्त किया था?
8. कृत्रिम भाषा 'एस्पेरैंतो' के जनक कौन हैं?
9. प्राचीन काल में ध्वनिविज्ञान के लिए कौनसा नाम प्रचलित था?
10. भाषाविज्ञान का उदय काल कौनसा माना जाता है?
10. कला का प्रमुख उद्देश्य क्या है?
12. भाषाविज्ञान विज्ञान है या कला ?

13. भाषाविज्ञान के चार केंद्र कौनसे हैं?
14. 'एस्पेरैटो' भाषा में कितनी पुस्तकें प्रकाशित हैं?
15. विज्ञान का मुख्य आधार क्या है?
16. भाषाविज्ञान किस अध्ययन विषय के निकट है?
17. भाषा के गठन में किसका महत्त्व होता है?
18. 'हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' शीर्षक पुस्तिका का प्रकाशन कब हुआ ?
19. विरामचिन्ह किसे कहते हैं?
20. उर्दू में वर्तनी के लिए क्या कहते हैं?
21. बंगला में वर्तनी के लिए क्या कहते हैं?
22. खड़ीपाईवाले व्यंजनों का संयुक्त रूप कैसे बनाया जाता है?
23. तत्पुरुष समास में 'हाइफ़न' का प्रयोग कब किया जाता है?
24. हिंदी में 'य', 'व' को क्या माना गया है?

5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

- | | |
|------------------|--------------------------------------|
| ♦ अभिलक्षण | मूलभूत लक्षण। |
| ♦ भाषिक संरचना | भाषा की रचना के विभिन्न स्तर। |
| ♦ व्यवहृत | प्रचलित। |
| ♦ अन्वेषण | खोज, शोध, अनुसंधान। |
| ♦ विज्ञान | ज्ञान की विशिष्ट पद्धति विशेष ज्ञान। |
| ♦ सम्यक् | परिपूर्ण, सर्वांगीण। |
| ♦ पाण्डु लिपि | हस्तलिखित प्रतिलिपि। |
| ♦ अर्जित | अर्जन की हुई, प्राप्त की हुई। |
| ♦ निष्काम | निरपेक्ष, स्वार्थ-रहित। |
| ♦ सुकरात | 'सॉक्रेटिस' नाम का हिंदी रूपांतर। |
| ♦ आत्माभिव्यक्ति | स्वयं को अभिव्यक्त करना। |
| ♦ ब्रेल - लिपि | अंधों के लिए प्रयुक्त लिपि। |

6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर :

प्रश्न 1. अ.

- | | |
|----------------------|-----------------|
| 1) व्याकरण | 11) जिह्वा |
| 2) वैज्ञानिक | 12) चार |
| 3) अंग्रेजी | 13) वेदकालीन |
| 4) वैज्ञानिक | 14) ऐतिहासिक |
| 5) सर विलियम जोन्स | 15) मनोभाषा |
| 6) 1786 | 16) प्रायोगिक |
| 7) 1928 | 17) भाषाविज्ञान |
| 8) विशिष्ट ज्ञान | 18) एस्पेरैंती |
| 9) तुलनात्मक व्याकरण | 19) 50,000 |
| 10) समाज विज्ञान | 20) तीन |
| 21) दो | 22) संस्कृत |
| 23) वर्तनी | 24) १९६१ |
| 25) अक्षरी | 26) स्पष्टता |
| 27) पूर्णविराम | |

प्रश्न 1. आ. एक वाक्य में उत्तर

1. विज्ञान का अर्थ होता है विशिष्ट या शास्त्रीय ज्ञान।
2. लिंग्वेस्टिक (Linguistics) शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन शब्द 'Lingua' से हुई है।
3. भाषाविज्ञान को सर्वप्रथम 'तुलनात्मक व्याकरण' (Comparative Grammar) नाम दिया गया।
4. भाषाविज्ञान के जनक 'सर विलियम जोन्स' है।
5. भाषाविज्ञान का प्रथम अधिवेशन 'हेग' में 1928 ई. में हुआ।
6. भाषाविज्ञान के पर्यायवाची नाम हैं भाषाशास्त्र, भाषाविचार, भाषा लोचन, भाषा तत्त्व, भाषिकी, आदि।
7. 'भारत और यूरोप की भाषाएँ एक ही स्रोत से विकसित हुई हैं यह मत सर विलियम जोन्स ने रॉयल एशियाटिक सोसायटी के सदस्यों के सामने व्यक्त किया था।
8. कृत्रिम भाषा 'एस्पेरैंतो' के जनक 'जमेनहाफ' है।
9. प्राचीन काल में ध्वनिविज्ञान के लिए 'शिक्षा' यह नाम प्रचलित था।
10. भाषाविज्ञान का उदय काल 1786 ई. माना जाता है।
11. कला का प्रमुख उद्देश्य 'मनोरंजन' होता है।
12. भाषाविज्ञान भाषा का 'वैज्ञानिक अध्ययन' है।

13. लंदन स्कूल, अमेरिकन स्कूल, प्राग स्कूल, कोपन हेगन स्कूल ये भाषा विज्ञान के चार केंद्र हैं।
14. 'एस्पेरेंटो' भाषा में करीब 50,000 पुस्तकें प्रकाशित हैं।
15. विज्ञान का मुख्य आधार कार्य-कारण-नियम की नित्यता है।
16. भाषाविज्ञान 'समाज विज्ञान' अध्ययन विषय के अधिक निकट है।
17. भाषा के गठन में उसकी वर्तनी का काफी महत्व होता है।
18. हिंदी वर्तनी का मानकीकरण शीर्षक पुस्तिका का प्रकाशन सन 1967 में हुआ।
19. वाक्यों, उपवाक्यों, या शब्दों के बीच में रुकने को विराम कहते हैं।
20. उर्दू में वर्तनी के लिए 'हिज्जे' कहते हैं।
21. बंगला में वर्तनी को 'बनाना' कहते हैं।
22. खड़ीपाईवाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाता है।
23. तत्पुरुष समास में हाइफ़न का प्रयोग केवल वहीं किया जाता है, जहाँ उसके बिना भ्रम होने की संभावना हो।
24. हिंदी में 'य' एवं 'व' को श्रुतिमूलक माना गया है।

7 सारांश :

1. 'भाषा' मनुष्य के विचार-विनिमय का प्रमुख साधन है। भाषाविज्ञान भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। भाषाविज्ञान शब्द 'भाषा' और 'विज्ञान' इन दो शब्दों के योग से बना है। यह Linguistics का हिंदी रूपांतर है। भाषाविज्ञान का सर्वप्रथम नाम तुलनात्मक व्याकरण था। इसके पर्यायी नाम भाषाशास्त्र, भाषिकी, भाषाविचार आदि हैं। आधुनिक भाषाविज्ञान का आरंभ 1786 ई. में माना जाता है। भाषाविज्ञान के जनक 'सर विलियम जोन्स' हैं।
2. भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने भाषाविज्ञान को परिभाषाबद्ध करने की कोशिश की है। भाषाओं का वैज्ञानिक रीति से सम्यक् अध्ययन भाषाविज्ञान है।
3. भाषाविज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व इस प्रकार हैं बौद्धिक जिज्ञासा की पूर्ति, विश्वबंधुत्व की भावना का विकास, भाषा की शुद्धता और प्रयोग का ज्ञान, भाषा का सम्यक् ज्ञान, समाज और संस्कृति अन्वेषण में सहायक, अन्य ज्ञान - विज्ञानों का सहायक, प्रागैतिहासिक एवं ऐतिहासिक अनुसंधान में योग, अनुवाद में सहायक, कृत्रिम भाषा के विकास में सहायक, तुलनात्मक अध्ययन में सहायक, लिपि निर्माण तथा सुधार में सहायक, वाक् चिकित्सा के लिए आवश्यक पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण और भाषा के मानकीकरण में सहायक आदि। जीवन के हर क्षेत्र से भाषाविज्ञान जुड़ा है।
4. विज्ञान और कला की अलग-अलग विशेषताओं का अध्ययन करने और उनके आधार पर भाषाविज्ञान को परखने से पता चलता है कि भाषाविज्ञान विज्ञान है, कला नहीं। कला का प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन होता है जब कि विज्ञान में कार्य-कारण-नियम की नित्यता होती है। भाषाविज्ञान में विज्ञान के सभी लक्षण दिखाई देते हैं। मगर कहीं कहीं पर कुछ अपवाद भी मिल जाते हैं। इसलिए हम भाषाविज्ञान को शुद्ध विज्ञान नहीं कह सकते। वैसे तो भाषाविज्ञान सामाजिक विज्ञान के अधिक निकट है।

8 स्वाध्याय :

अ. दीर्घोत्तरी प्रश्न

1. भाषाविज्ञान का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसकी परिभाषाएँ दीजिए।
2. भाषाविज्ञान का महत्व एवं उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।
3. मानक वर्तणी के नियमोंका सोदाहरण विवेचन कीजिए।

आ. टिप्पणियाँ

1. भाषाविज्ञान का नामकरण।
2. भाषाविज्ञान का स्वरूप।
3. भाषाविज्ञान की भारतीय परिभाषाएँ।
4. भाषाविज्ञान की पाश्चात्य परिभाषाएँ।

9 क्षेत्रीय कार्य :

१. भाषा संबंधी प्रयोगशाला की जानकारी प्राप्त कीजिए।
२. भाषाविज्ञान के उपयोग का परिचय प्राप्त कीजिए।
३. विज्ञान के विषय तथा भाषाविज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।
४. अपनी पाठ्यपुस्तक से हलन्त शब्दों की तथा सामुहिक शब्दों की सूचियाँ तैयार कीजिए।
५. अपनी पाठ्यपुस्तक से 'ए' और 'ये' वाले शब्द चुनकर दो वर्गों में विभाजित कर सूचियाँ बनाइए और इन दोनों के अंतर को समझने की कोशिश कीजिए।

10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

- | | | |
|--|---|------------------------|
| (1) हिंदी व्याकरण | : | कामताप्रसाद गुरू |
| (2) हिंदी व्याकरण एवं रचना | : | प्रा. कृ. ज. वेदपाठक |
| (3) हिंदी व्याकरण (रस-छंद-अलंकार सहित) | : | डॉ. उमेश चन्द्र शुक्ल |
| (4) हिंदी भाषा एवं व्याकरण | : | डॉ. मायाप्रकाश पाण्डेय |
| (5) उपयोगी हिंदी व्याकरण | : | ज्ञा. का. गायकवाड |
| (6) व्यावहारिक हिंदी व्याकरण तथा रचना | : | डॉ. हरदेव बाहरी |
| (7) भाषाविज्ञान एवं हिंदी भाषा | : | डॉ. हणमंतराव पाटील |
| (8) प्रयोजनमूलक हिंदी | : | डॉ. माधव सोनटक्के |
| (9) हिंदी की मानक वर्तनी | : | कैलाशचंद्र भाटिया |
| (10) मानक हिंदी व्याकरण | : | डॉ. शशिशेखर तिवारी |



इकाई क्र. 2

भाषा-विज्ञान का अन्य ज्ञान-विज्ञानों से संबंध

अनुक्रमणिका -

- 1 उद्देश्य
- 2 प्रस्तावना
- 3 विषय-विवेचन
भाषा-विज्ञान का अन्य ज्ञान-विज्ञानों से संबंध।
 - 3.1 भाषा-विज्ञान और साहित्य
 - 3.2 भाषा-विज्ञान और व्याकरण
 - 3.3 भाषा-विज्ञान और समाज भाषाविज्ञान
 - 3.4 भाषा-विज्ञान और इतिहास
 - 3.5 भाषा-विज्ञान और मनोविज्ञान
 - 3.6 भाषा-विज्ञान और भूगोल
- 4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न
- 5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
- 6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
- 7 सारांश
- 8 स्वाध्याय
- 9 क्षेत्रीय कार्य
- 10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

- 1) भाषा-विज्ञान और भौगोलिक परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- 2) भाषा-विज्ञान और मानव जाति के इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।
- 3) भाषा-विज्ञान और समाज व्यवस्था का महत्व और उपयोगिता समझने में समर्थ होंगे।
- 4) भाषा-विज्ञान का मनोविज्ञान के साथ संबंध जान सकेंगे।

- 5) भाषा-विज्ञान और विविध साहित्य विज्ञान के अंगों से परिचित हो सकेंगे।
- 6) भाषा-विज्ञान और व्याकरण का महत्व, उपयोगिता और आंतरिक संबंध समझने में समर्थ होंगे।

2. प्रस्तावना -

ज्ञान एक अखण्डित धारा है। तत्त्वतः इस अखण्डित ज्ञान धारा को अलग-अलग शास्त्रों तथा विज्ञानों में इस प्रकार विभाजित नहीं किया जा सकता कि वे शास्त्र तथा विज्ञान एक दूसरे से पूर्णतः अलग हो। केवल अध्ययन की सुविधा के लिए अखण्डित ज्ञान को हमने अलग-अलग विज्ञानों में विभाजित करने का प्रयास किया है। अखण्डित ज्ञान का यह विभाजन मात्र व्यावहारिक है, तात्त्विक नहीं। व्यावहारिक दृष्टि से ही सही अखण्ड ज्ञान को विभाजित किए जाने के कारण तथा एक ही ज्ञान के अंश होने के कारण सभी ज्ञान-विज्ञान की शाखाएँ किसी-न-किसी रूप में एक-दूसरे से संबंधित हैं।

भाषा-विज्ञान मानव द्वारा आविष्कृत विभिन्न शास्त्रों एवं विज्ञानों से अपने अध्ययन की सामग्री ग्रहण करता है और उन्हें प्रभावित करता है। डॉ. मनमोहन गौतम के शब्दों में 'भाषा-विज्ञान' का सूक्ष्म से सूक्ष्म विज्ञान मनोविज्ञान से लेकर ठोस भौतिक विज्ञान तक से प्रत्यक्ष या परोक्ष संबंध अवश्य है इसका एक कारण है और वह यह कि भाषा मनुष्य की भाव अथवा विचाराभिव्यक्ति की शक्ति है। अतः भाषा को ही अध्ययन का विषय बनाने वाले भाषा विज्ञान का संबंध सभी विज्ञानों से होना स्वाभाविक है।

भाषा विज्ञान का प्रत्यक्ष संबंध भाषा से है और भाषा का संबंध मनुष्य से है। भाषा मानव की प्रवृत्ति और प्रकृति का यथार्थ दर्पण है। भाषा मानव जीवन का अभिन्न अंग है। अतः मानव जीवन से संबंधित विज्ञानों और शास्त्रों से भी भाषा विज्ञान का घनिष्ठ संबंध स्थापित होता है। जिस प्रकार समाज का एक व्यक्ति अनेक रूपों में (जैसे बाप, भाई, काका, दादा, नाना आदि) अनेक व्यक्तियों से संबंधित होता है, उसी प्रकार, भाषा विज्ञान की अनेक शाखाएँ अन्य विज्ञानों से निकटतम संबंध रखती हैं। भाषा विज्ञान का तात्त्विक ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन विज्ञानों तथा शास्त्रों का आश्रय लेना पड़ता है। तो दूसरी ओर कुछ तथ्यों के वास्तव ज्ञान के लिए ये भाषा विज्ञान का आश्रय लेते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मनुष्य जीवन से संबंधित सभी ज्ञान विज्ञानों का भाषा विज्ञान से संबंध होता है। इन ज्ञान विज्ञानों का भाषा विज्ञान से क्या संबंध है, इस बात को इस इकाई में स्पष्ट किया जा रहा है।

3. विषय - विवेचन -

भाषाविज्ञान का अन्य ज्ञान-विज्ञानों से संबंध-

भाषाविज्ञान का ज्ञान-विज्ञान की अन्य शाखाओं से नजदीकी संबंध होता है। एक की जानकारी के बिना दूसरे का अध्ययन प्रायः असंभव होता है। भाषाविज्ञान का कुछ विज्ञानों के साथ सामान्य, कुछ विज्ञानों के साथ पूरक तो कुछ ज्ञान-विज्ञानों से अन्योन्याश्रित संबंध होता है। भोलानाथ तिवारी ने भाषाविज्ञान का व्याकरण, साहित्य, मनोविज्ञान, शरीरविज्ञान, भूगोल, इतिहास, भौतिकशास्त्र, तर्कशास्त्र, मानव विज्ञान, दर्शन आदि विज्ञानों से होनेवाले संबंधों का विवेचन किया है। यहाँ हम निम्नलिखित संबंधों का विवेचन करेंगे। हमारे पाठ्यक्रम के अनुसार कुछ प्रमुख संबंध इसप्रकार है-

- 3.1 भाषाविज्ञान और साहित्य
- 3.2 भाषाविज्ञान और व्याकरण
- 3.3 भाषाविज्ञान और समाज भाषाविज्ञान
- 3.4 भाषाविज्ञान और इतिहास
- 3.5 भाषाविज्ञान और मनोविज्ञान
- 3.6 भाषाविज्ञान और भूगोल

3.1 भाषाविज्ञान और साहित्य-

भाषाविज्ञान और साहित्य का घनिष्ठ संबंध है। भाषाविज्ञान साहित्य के बिना अधूरा है और साहित्य भाषाविज्ञान के बिना अधूरा है। भाषाविज्ञान और साहित्य दोनों में भाषा तत्त्व महत्वपूर्ण है। 'भाषा' भाषाविज्ञान का साध्य है, तो साहित्य के लिए 'अभिव्यक्ति'। साहित्य भाषाविज्ञान के लिए सामग्री संकलन करने का कार्य करता है। भाषा के तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन में साहित्य की सहायता लेनी पड़ती है। उदाहरण के लिए साहित्य से ही यह पता चलता है कि किस तरह संस्कृत से पालि, पालि से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और अपभ्रंश से हिंदी की उत्पत्ति हुई और खड़ी बोली, ब्रज, अवधी, बघेली, छत्तीस गढ़ी, भोजपुरी आदि बोलियों का प्रादुर्भाव हुआ तथा खड़ी बोली उत्तरोत्तर विकसित होकर राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचलित हुई। लैटिन, ग्रीक, संस्कृत, जर्मन, ईरानी, अवेस्ता आदि भाषाओं के प्राचीन साहित्य के आधार पर ही भाषाविज्ञान यह कहता है कि इन भाषाओं का मूल स्रोत एक है तथा ये सभी एक परिवार की भाषाएँ हैं।

जीवित भाषाओं के अध्ययन को छोड़कर पुरानी या मृत भाषा का, भाषाविज्ञान चाहे जिस रूप में अध्ययन करना चाहे, उसे बार-बार साहित्य का आश्रय तो लेना ही पड़ेगा। साथ में जीवित भाषा के संबंध में भी 'क्यों', 'कब', 'कैसे' इत्यादि के उत्तर के लिए भाषाविज्ञान को साहित्य का सहारा लेना पड़ेगा।

ध्वनि परिवर्तनों एवं रूप परिवर्तनों को जानने के लिए भी साहित्य भाषाविज्ञान को पर्याप्त सामग्री प्रदान करता है। अर्थ परिवर्तन के सम्यक् अध्ययन के लिए भाषाविज्ञान को साहित्य की ही मदद लेनी पड़ती है। जैसे - साहित्य द्वारा ही इस बात का पता लगाया जाता है कि कैसे 'असुर' शब्द पहले देवताओं के लिए प्रयुक्त किया जाता था। इसी तरह कैसे 'स्वर्गवास' शब्द देवताओं के निवास के अर्थ को छोड़कर 'मृत्यु' का पर्याय हो गया?

दूसरी ओर साहित्य भी भाषाविज्ञान से विपुल सहायता लेता है। भाषाविज्ञान साहित्य के क्लिष्ट अर्थों एवं विचित्र प्रयोगों तथा उच्चारण संबंधी समस्याओं पर प्रकाश डालता है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने भाषाविज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर जायसी कृत 'पद्मावत' के बहुत से शब्दों को उनके मूल रूपों से जोड़कर उनके अर्थों को स्पष्ट किया है। साथ ही शुद्ध पाठ के निर्धारण में भी इससे पर्याप्त सहायता ली है। इस प्रकार भाषाविज्ञान और साहित्य एक-दूसरे के सहायक हैं।

भाषाविज्ञान के दो प्रमुख अंग ऐतिहासिक और तुलनात्मक भाषाविज्ञान पूर्णतया साहित्य पर आधारित हैं। साहित्य प्रारंभिक, मध्यकालीन और वर्तमान कालीन तीनों रूपों को प्रस्तुत करता है। इसके द्वारा ही ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है। तुलनात्मक भाषाविज्ञान का आधार भी विभिन्न भाषाओं का साहित्य ही है। यदि विभिन्न भाषाओं का साहित्य उपलब्ध न होता तो तुलनात्मक भाषाविज्ञान का विकास असंभव था।

भाषाविज्ञान का जन्म ही संस्कृत, ग्रीक, लैटिन आदि भाषाओं के साहित्य के अध्ययन से ही हुआ है। साहित्य के द्वारा ही हमें ज्ञान होता है कि किस प्रकार वैदिक, संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश एवं हिंदी आदि भाषाओं का ऐतिहासिक दृष्टि से विकास हुआ है। साहित्य के अभाव में कई प्राचीन भाषाएँ लुप्त हो गई हैं। साहित्य ही अर्थ-विज्ञान और अर्थ विकास का आधार है। शब्दों के अर्थों में किस प्रकार अर्थ-परिवर्तन होते हैं, अनुपयोगी शब्दों का किस प्रकार विनाश होता है, नये शब्दों का जन्म किस प्रकार होता है आदि की कथाएँ साहित्य में ही प्राप्त होती हैं।

साहित्य और भाषाविज्ञान एक दूसरे के उपकारक हैं। साहित्य भाषा के प्राचीन रूपों को सुरक्षित रखकर भाषाविज्ञान के अध्ययन के लिए उपयोगी सामग्री प्रस्तुत करता है। साहित्य के अनेक अस्पष्ट और दर्बोध शब्दों के अर्थ भाषाविज्ञान की सहायता से ही स्पष्ट किए गए हैं। एक भाषा का विज्ञान अनेक भाषाओं से संबंधित होकर विभिन्न भाषाओं के साहित्य का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि साहित्य भाषा विज्ञान का उपकारक है तो भाषाविज्ञान भी साहित्य का उपकारी है।

3.2 भाषाविज्ञान और व्याकरण -

व्याकरण शब्द 'वि' और 'आकरण' के योग से बना है। व्याकरण शब्द का अर्थ है, 'टुकड़े करना'। यहाँ शब्दों के टुकड़े-टुकड़े करके उसके ठीक स्वरूप को बनाना व्याकरण का काम है। व्याकरण और भाषाविज्ञान में बहुत घनिष्ठ संबंध है। इसी घनिष्ठ संबंध के कारण दोनों को एक या भाषाविज्ञान को व्याकरण, या व्याकरण को भाषाविज्ञान मानने का भ्रम लोगों में हो जाता है। इन दोनों में अंतर स्पष्ट है -

भाषाविज्ञान व्याख्यात्मक विषय है, जबकि व्याकरण वर्णनात्मक। व्याकरण के द्वारा ही कोई व्यक्ति किसी भाषा का शुद्ध एवं ठीक उच्चारण कर उसे व्यवहार में ला सकता है। किसी भाषा के शुद्ध एवं अशुद्ध प्रयोगों को बताने का कार्य व्याकरण करता है। इसके विपरीत भाषाविज्ञान, विज्ञान होने के कारण इस बात को जानना चाहता है कि कब, कहाँ, कैसा प्रयोग होता है।

जहाँ तक संबंधों का प्रश्न है, भाषा के अध्ययन में दोनों अन्योन्याश्रित हैं। बिना भाषाविज्ञान की जानकारी से अच्छा व्याकरण नहीं लिखा जा सकता और दूसरी ओर भाषाओं के विश्लेषण में भाषाविज्ञान व्याकरण से पर्याप्त सामग्री और सहायता लेता है।

व्याकरण जीवित भाषा का रूप है। भाषा के परिवर्तन को समझने की क्रिया भाषाविज्ञान करता है और व्याकरण उन्हें संभाल लेता है। उदा. व्याकरण यह बतलाता है कि 'जा' का भूतकाल रूप 'गया' होता है। लेकिन यह कहाँ से आया यह भाषाविज्ञान बताता है।

भाषा की साधुता या असाधुता बताने का कार्य व्याकरण करता है। इस दृष्टि से व्याकरण भाषाविज्ञान का अनुगामी है। भाषाविज्ञान नए रूपों का सहज समावेश कर सकता है, लेकिन व्याकरण नहीं। इसलिए व्याकरण पुराणमतवादी है, जबकि भाषाविज्ञान प्रगतिवादी है।

व्याकरण का अर्थ है विश्लेषण करना। इसकी व्युत्पत्ति वि + आ उपसर्ग कृ धातु से 'अन' (ल्युट) प्रत्यय जोड़कर हुई है। व्याकरण भाषा के अंगोंका विच्छेदन करके उसके सही स्वरूप को समझने में सहायता करता है। व्याकरण का व्यापक रूप में संस्कृत साहित्य में प्रयोग हुआ है। ध्वनियों का उच्चारण, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, विभक्तियाँ जिसका उपयोग कर क्रिया के विभिन्न गुणों की और लकारों के रूप, तद्धित और कृदन्त शब्दों के निर्माण की प्रक्रिया, स्त्री प्रत्यय और उनसे बननेवाले शब्द आदि अनेक विषय आ जाते हैं। भट्टोजि

दीक्षित की वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी, पाणिनि की अष्टाध्यायी, पतंजलि का महाभाष्य, कात्यायन की व्याख्याएँ आदि ग्रंथोंका अध्ययन क्षेत्र व्याकरण ही है। भर्तृहरि का 'वाक्यपदीय' वाक्यों और पदों के अन्तःसंबंध को परिभाषित करता है। व्याकरण के उद्देश्य को कई विद्वानों ने अपने विचारानुसार निरूपित किया है। व्याकरण भाषा के सम्यक् और निर्दोष प्रयोग का ज्ञान कराता है। भाषा के अध्ययन में व्याकरण का महत्त्व एक व्याख्याकार के अनुसार है। साहित्यकार कुबेरनाथ ने अपने निबंध में व्याकरण की तुलना पुलिसमैन से की है। पुलिस का काम है समाज में व्यवस्था बनाए रखना। भाषिक व्यवस्था बनाए रखने का काम व्याकरण करता है। पुलिस नियमों का निर्माण नहीं करती बल्कि विधायकों द्वारा निर्माण किए गए नियमों का पालन कराने के लिए अपनी शक्ति का इस्तेमाल करती है। व्याकरण भाषा के नियमों का सृष्टा नहीं होता। केवल उन्हें उपयोग में लानेवाला अनुचर होता है। भाषा नित्य परिवर्तनशील होती है। इस सहज प्रवृत्ति के कारण भाषा बदलना चाहती है। व्याकरण इस परिवर्तन को रोकना चाहता है। संस्कृत भाषा को व्याकरणबद्ध करने का कार्य आचार्य पाणिनि ने किया। इससे वैदिक भाषा की रूपविविधता पर नियंत्रण आने लगा। भाषा सुव्यवस्थित होती गई। किंतु व्याकरणिक दबाव के कारण भाषा का स्वाभाविक विकास अविरोद्ध हो गया और कालान्तर में उसकी तुलना निर्जीव भाषाओं में होने लगी। दूसरी ओर पालि, प्राकृत जैसी लोकभाषाएँ विकासक्रम की राह पर चलती हुई भारतीय आर्यभाषाओं के वर्तमान रूप तक पहुँच गयी। व्याकरण की तुलना भाषाविज्ञान के साथ की जाय तो व्याकरण और भाषाविज्ञान का क्षेत्र एक ही दिखाई देता है।

भाषाविज्ञान में ध्वनि, पद और वाक्य को ध्वनिविज्ञान, पदविज्ञान और वाक्यविज्ञान कहते हैं। भाषाविज्ञान इनका विकास और इतिहास का अध्ययन करता है। विकास और परिवर्तन के कारणों की छानबीन करता है और स्थिति का विश्लेषण करता है। व्याकरण का इतिहास और विश्लेषण से कोई संबंध नहीं रहता। व्याकरण केवल भाषाविज्ञान के तत्कालीन स्वरूप से संबंध रखता है। अतः संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी के व्याकरण अपनी-अपनी भाषाओं तक सीमित है। व्याकरण स्थान की दृष्टि से एक ही भाषा तक सीमित होता है। जैसे हिन्दी का व्याकरण लिंग का विचार करते समय केवल हिन्दी में दो ही लिंग हैं किंतु स्रोत भाषा के (संस्कृत) तीन लिंग होंगे, मराठी या गुजराती भाषा में भी लिंगों की संख्या तीन होगी। याने प्रत्येक भाषा का अपना-अपना ढाँचा होता है और व्याकरण का क्षेत्र उसी तक सीमित होता है। व्याकरण, भाषा विशेष के वर्तमान स्वरूप का वर्णन करता है न उसके नियमों का विश्लेषण, न इतिहास में हो जाता है किंतु इसका तात्पर्य व्याकरण कला है, विज्ञान नहीं। स्वीट जैसे भाषावैज्ञानिकों ने व्याकरण को 'कला' भी माना है। उनके अनुसार कला का संबंध सौंदर्य और उपयोगता से होता है और न ही भाषा की शुद्धता और न ही उपयोगिता से। व्याकरण केवल वाक्य शुद्ध है या अशुद्ध इसका संकेत करता है। व्याकरण का क्षेत्र वर्ण, लिपि, वर्तनी, लिंग, वचन, कारक, पुरुष, क्रियार्थ, वाक्यभेद इत्यादि विषयों तक सीमित होता है न उच्चारण प्रक्रिया का विवेचन न अर्थ परिवर्तन की कारण मीमांसा। व्याकरण परंपरावादी होता है जब तक कोई भाषिक परिवर्तन भाषा द्वारा मान्य नहीं होता तब तक व्याकरण उसके प्राचीन रूपको शुद्ध मानता है। किंतु नया नियम स्वीकार्य होने पर उसके पुराने नियमों को अग्राह्य समझा जाता है। मराठी में संस्कृत के तत्सम इकारान्त, उकारान्त शब्द पहले -ह्रस्व लिखे जाते थे जैसे - कवि, ऋषि, स्थिति, गुरु, साधु, पशु किंतु अब ये कवी, ऋषी, स्थिती, गुरू, साधू और पशू इस रूप में लिखे जाते हैं।

भाषा वैयाकरणों और शब्द कोषों ने 'व्याकरण' के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। 'हिन्दी विश्वकोश' के अनुसार किसी भी भाषा के अंग-प्रत्यंग का विश्लेषण तथा विवेचन व्याकरण कहलाता है। व्याकरण की परिभाषा मानक हिन्दीकोश में दी गई है - "व्याकरण वह शास्त्र है, जिसमें बोलचाल तथा साहित्य में प्रयुक्त होने वाली भाषा का स्वरूप, उसके गठन, उसके अवयवों, उसके प्रकारों और पारस्परिक संबंधों तथा उसके रचनाविधान और रूपपरिवर्तन का विचार होता है।"

कामताप्रसाद गुरु ने व्याकरण के बारे में कहा है, "जिस शास्त्र में शब्दोंके शुद्ध रूप और प्रयोग के नियमों का निरूपण होता है उसे व्याकरण कहते हैं।"

व्याकरण के कार्य को देखते हुए व्याकरण की परिभाषा इस प्रकार होती है - "व्याकरण वह शास्त्र है, जिसमें किसी भाषा के अंगों का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक निरूपण किया जाता है, जो संबंध भाषा के शुद्ध उच्चारण, लेखन और आकलन में सहायक होता है।"

व्याकरण की प्राथमिक बात शुद्धता है। उसका काम भाषा के प्रचलित रूप का सम्यक् ज्ञान कराना है। बोलनेवालों के द्वारा भाषा का गलत प्रयोग न केवल हास्यास्पद होता है बल्कि उससे कई बार सम्प्रेषण में भी बाधा आती है।

भाषा और व्याकरण के अध्ययन में एक दूसरे के सहायक होते हैं। भोलानाथ तिवारी के मतानुसार, "बिना भाषाविज्ञान की जानकारी के भाषाविज्ञान और व्याकरण दोनों का सीधा संबंध भाषा से है। अतः भाषाविज्ञान और व्याकरण एक दूसरे के इतने समीप हैं कि कभी-कभी दोनों को एक समझा जाता है, या फिर भाषाविज्ञान को व्याकरण तथा व्याकरण को भाषाविज्ञान समझने का आभास या भ्रम होता है। व्याकरण को हम शास्त्र कह सकते हैं, जो इस बात के निर्देश पर अधिक बल देता है, कि भाषा में कहाँ, कैसा प्रयोग होना चाहिए, कैसा प्रयोग शुद्ध है और कैसा अशुद्ध, इसके विपरीत भाषाविज्ञान है जिसका संबंध इस आदर्श से नहीं है कि कहाँ कैसा प्रयोग होना चाहिए। वह तो केवल इस बात को जानना चाहता है कि कब, कहाँ, कैसा प्रयोग होता है। इन उद्घरणों से स्पष्ट होता है कि भाषाविज्ञान और व्याकरण में कुछ विषमता (भेद) अवश्य है।

भाषाविज्ञान का कार्य वैज्ञानिक है, तो व्याकरण का कलात्मक। व्याकरण का क्षेत्र अत्यंत संकुचित है, जबकि भाषाविज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत है। भाषाविज्ञान और व्याकरण में निम्न भेद हैं-

- 1) व्याकरण कला है, तो भाषाविज्ञान विज्ञान है।
- 2) व्याकरण का क्षेत्र सीमित है, तो भाषाविज्ञान गहराई, व्यापकता से भरा हुआ है।
- 3) व्याकरण भाषा के विशिष्ट नियमों को सामने रखता है इसलिए वह वर्णनात्मक है, तो भाषाविज्ञान व्याख्यात्मक है।
- 4) व्याकरण का कार्य नियम-निर्धारण है, तो भाषाविज्ञान का कार्य भाषा परिमार्जन है।
- 5) व्याकरण भाषाविज्ञान का अनुगामी है।
- 6) व्याकरण पुराणमतवादी है, तो भाषाविज्ञान प्रगतिवादी है।
- 7) भाषाविज्ञान भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन है, तो व्याकरण भाषा की रचना स्पष्ट करता है।
- 8) व्याकरण केवल 'रूप' देकर चुप होता है। जब कि भाषाविज्ञान गहराई में जाकर बताता है कि वह रूप कहां से प्राप्त है, कितना पुराना है। इस बात को भोलानाथ तिवारी ने इस तरह समझाया है कि-व्याकरण

‘जा (ना) का भूतकालिक रूप गया बताकर चुप होगा पर भाषाविज्ञान गहराई में जाकर बताएगा कि ‘गया’ का ‘जा’ से कोई संबंध नहीं। संस्कृत में ‘गम’ और ‘या’ दो स्वतंत्र धातुएँ थीं। ‘या से जा’ का विकास हुआ और जाता, जाना, जाये, जाया आदि रूपों का प्रचलन होता गया’।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भाषाविज्ञान और व्याकरण का पारस्परिक अत्यंत निकटतम (घनिष्ठ) संबंध है।

3.3) भाषाविज्ञान और समाज भाषाविज्ञान -

मानव एक सामाजिक प्राणी है। भाषा विचार-विनिमय का सर्वोत्तम साधन है। भाषा आद्यन्त सामाजिक वस्तु है। मनुष्य अपनी भावनाओं, विचारों का आदान-प्रदान भाषा द्वारा करता है। भाषा समाज का दर्पण है और समाज भाषा का अनुचर है। भाषा समाज में ही उत्पन्न होती है और समाज में ही विकसित होती है।

समाज के उत्थान एवं पतन, उन्नति एवं अवनति, असभ्यावस्था एवं सभ्यावस्था आदि का सांगोपांग विवरण समाज विज्ञान में रहता है। भाषा एक सामाजिक संपत्ति है। अतः सामाजिक उत्थान-पतन के साथ-साथ भाषा का भी उत्थान-पतन होता रहता है, क्योंकि समाज जैसे-जैसे सभ्यता के उत्तरोत्तर विकास के सोपानों पर चढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उनकी भाषा भी विकास की ओर अग्रसर होती है और उसकी ध्वनियों, रूपों एवं अर्थों में भी विकास एवं परिवर्तन के दर्शन होते हैं। इसी भाषा विकास को प्रथम वैदिक संस्कृत, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, ब्रज, अवधी, खड़ीबोली आदि में क्रमशः देखा जा सकता है।

समाजशास्त्र के अध्ययन से ही भाषाविज्ञान की उन अवस्थाओं का पता चलता है, जिसमें भाषा का विकास होता है। समाजशास्त्र के किन प्रभावों से ‘सांप’ को कीड़ा और ‘लाश’ को मिट्टी कहते हैं? क्यों गाय ‘बियाती’ है, स्त्री नहीं? इन सब बातों का उत्तर समाजशास्त्र के सूक्ष्म अध्ययन से ही मिल सकता है।

समाज विज्ञान केवल सामाजिक विकास का ही बोध नहीं कराता, अपितु अन्य समाजों के प्रभाव से उत्पन्न सामाजिक रीति-नीति, आचार-विचार, बोलचाल, व्यवहार आदि का विवरण भी प्रस्तुत करता है। वह यह भी बतलाता है कि किस तरह एक विजयी एवं प्रगतिशील समाज की भाषा में प्रचलित शब्द दूसरी पराजित एवं परतंत्र समाज की भाषा पर अपना प्रभाव डाला करते हैं और वह समाज उन्हें किस तरह सहर्ष अपनाने में गौरव का अनुभव करता है। जैसे हिंदी क्षेत्र में पहले माता-पिता, चाचा-चाची, ताऊ-ताई, मौसा-मौसी, भाई-बहन आदि शब्द परिवार में बोले जाते थे, किंतु मुस्लिम समाज के संपर्क में आते ही वालिद-अम्मीजान, मियाँ-बीबी आदि शब्द प्रचलित हुए और फिर अंग्रेजी संपर्क में आते ही मम्मी-डैडी, आंटी-अंकल, पापा आदि शब्दों का प्रचार अत्यधिक मात्रा में हो गया। इस प्रकार सामाजिक विकास के साथ-साथ भाषा भी किस तरह विकसित एवं परिवर्तित होती रहती है, इसका स्पष्ट ज्ञान समाज विज्ञान से ही प्राप्त होता है।

भाषा के प्रयोग से विभिन्न शब्द आदरार्थ (आप), सामान्य (तुम), अनादरार्थ (तू), मूलतः समाज से ही सम्बद्ध हैं। अतः इनका अध्ययन भाषाविज्ञान समाजशास्त्र के बिना नहीं कर सकता। इसप्रकार भाषाविज्ञान के लिए समाज विज्ञान का होना नितांत आवश्यक है।

भाषा का व्यवहार व्यक्तियों अर्थात् मनुष्यों के द्वारा किया जाता है। व्यक्ति समाज का मुख्य घटक है। व्यक्ति के आचार-विचार, उसकी रुचियाँ, उसके व्यवहार, उसके परिवार और समाज से संबंध समाज विज्ञान के अंतर्गत समाविष्ट हैं। भाषा-विचार विनिमय का श्रेष्ठ साधन है। मनुष्य अपने भाव-भावनाओं का विचारों का आदान-प्रदान भाषा द्वारा करता है। भाषा समाज की संपत्ति है। वह समाज में रूप ग्रहण करती है।

भाषा में रीति-रिवाज, शिष्टाचार, आचार-विचार और व्यवहार के सैकड़ों शब्द हैं, जिनकी व्याख्या समाज विज्ञान के ज्ञान से ही सरलता से हो सकती है। समाजविज्ञान की सहायता से ही यह बताया जा सकता है कि कैसे विकास या -हास के कारण शब्दों के रूप परिवर्तित हुए और अर्थ परिवर्तन हुआ जैसे कि उपाध्याय से-ओझा या झा, चतुर्वेदी से चौबे, त्रिवेदी से दूबे, शुक्ल-शुक्ला या सुकुल आदि प्रथम शब्द मूल रूप में योग्यता वाचक थे, दूसरे शब्द बाद में जातिवाचक हो गये। किस प्रकार धार्मिक विद्वेष के कारण अशोक का 'देवानां प्रिय' - 'देवाना प्रिय इतिच मूर्खें' मुखवाचक हो गया। दास, दस्यु, अनाथ, काफिर, फिरंगी आदि शब्दों के पीछे इतिहास भरा हुआ है, जो समाज विज्ञान से ही जाना जा सकता है।

अर्वाचीन ज्ञान समाज भाषाविज्ञान की एक शाखा है। जिसका जन्म पाश्चात्य देशों में चार-पाँच दशक पहले हुआ। समाज भाषाविज्ञान में सामाजिक संदर्भोंको कटकर भाषा का अध्ययन नहीं हो सकता। परंपरागत भाषाविज्ञान भाषा को वाक्यों का समूह मानता है। वाक्य पदों के समूह से बनते हैं। पद शब्द और प्रत्यय आदि के संयोग से तथा शब्द ध्वनियों के संयोग से। परंतु इतना मानना पर्याप्त नहीं है। मनुष्य केवल हाथ-पाँव और अन्य अवयवों का समूह मात्र नहीं इससे बढ़कर मनुष्य एक सजीव प्राणी है। उसी प्रकार भाषा ध्वनियों, पदों और वाक्यों का समूह नहीं, समाज मानस की अभिव्यक्ति है।

भाषा प्रारंभ से सामाजिक वस्तु है। उसके द्वारा हम मानव समुदाय अपने भाव या विचार ही अभिव्यक्त नहीं करते तथापि अपने संपूर्ण सामाजिक जीवन को साकार करते हैं। हर समाज के संस्कार उसकी भाषा से संबंधित होते हैं। उदा. मानव मात्र के प्रति पारिवारिकता का भाव भारतीय संस्कृति की अन्यतम विशेषता है। पाश्चात्य संस्कृति में हम इसका अभाव पाते हैं। कोई भी भारतीय संस्कृति का व्यक्ति अपने माता-पिता की आयु के बुजुर्गों को मिस्टर सक्सेना या मिसेस शर्मा कहकर संबोधित नहीं करता। वे उसके लिए 'चाचा जी' या 'चाची जी' है। एकाध अपरिचित व्यक्ति के लिए हम 'भाई साहब' या 'बहन जी' का प्रयोग करते हैं। इसी विशेषता के कारण स्वामी विवेकानंद के 'भाइयों और बहनों' संबोधन ने सर्वधर्म सम्मेलन के श्रोताओं को मोह लिया था। यह व्यापक परिवार - भाव हमारी भाषाओं में सर्वत्र प्रतिबिंबित होता है।

शिष्टाचार के बारे में प्रत्येक भाषिक समाज में अपनी-अपनी परंपराएँ हैं। आदर सूचक 'जी', 'बहुवचन का प्रयोग, पति के लिए 'आर्यपुत्र' का प्राचीन संबोधन, राजा के लिए 'स्वामी' या 'अन्नदाता' जैसे शब्द सामाजिक परंपराओं ने ही दिए हैं। अंग्रेजी में सर, मॅडम, एक्सक्यूज मी, आइ एम सॉरी, थैंक्यू प्रयोग पाश्चात्य संस्कृति से आए हैं और भारतीयता में ढलकर 'क्षमा कीजिए', 'धन्यवाद', 'मुझे खेद है' जैसे बन गए हैं। मुस्लिम संस्कृति में 'तशरीफ लाइए', 'तशरीफ रखिए' आदि बातें कहीं मूलरूप में तो कहीं 'पधारिए' और 'बिराजिए' बनकर हिन्दी में आ गयी है।

समाज व्यवस्था में पद के साथ प्रतिष्ठा है। आदर के साथ स्नेह है, अपनत्व के साथ शिष्टाचार है और इन सब दशाओं का बोध भाषा व्यवहार के साथ जुड़ा हुआ है। भाषा के द्वारा समाज की उदारता और कंजुसी अथवा स्वार्थ का रूप स्पष्ट हो जाता है। समाज-विज्ञान का क्षेत्र व्यापक है। वह आदमी के छोटे से छोटे क्रिया-कलापों से लेकर बड़े से बड़े युगांतकारी निर्णय का लेखा-जोखा रखता है। इसी से स्पष्ट होता है कि समाज-विज्ञान और भाषा-विज्ञान एक दूसरे पर आधारित हैं और एक दूसरे के पूरक भी।

3.4) भाषाविज्ञान और इतिहास -

भाषाविज्ञान और इतिहास का घनिष्ठ संबंध है। दोनों एक दूसरे के उपकारक हैं। भाषा-विज्ञान की सहायता से प्राचीन अभिलेखों, शिलालेखों, सिक्कों आदि का अध्ययन करके प्राचीन इतिहास के अज्ञान और अंधकारयुगीन इतिहास पर प्रकाश डाला जाता है। मानव जाति के विकास, उत्थान एवं पतन के विवरण को इतिहास कहते हैं। भाषाओं के उद्भव एवं विकास को जानने के लिए इतिहास भाषाविज्ञान को पर्याप्त सहायता प्रदान करता है। इसलिए इतिहास और भाषाविज्ञान का घनिष्ठ संबंध है। इतिहास के अंतर्गत हम जातियों की गाथा, उनके विकास और -हास का अध्ययन करते हैं। इतिहास काल विशेष से सम्बद्ध भाषा पुस्तकों और शिलालेखों आदि में पाया जाता है। ये साधन, भाषाविज्ञान के लिए सामग्री प्रदान करते हैं। यहां इतिहास के तीन रूपों को लेकर भाषाविज्ञान के साथ परस्पर संबंध का निरूपण किया जा रहा है-

(क) राजनीतिक इतिहास-

किसी अन्य देश का राज्य किसी देश पर होने से उस देश की भाषा भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। भारत पर मुसलमानों एवं अंग्रेजों के राज्य होने के कारण हजारों की संख्या में फारसी और अंग्रेजी के शब्दों का हिंदी में प्रवेश इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। इसके विपरीत अंग्रेजी आदि में भी अनेक हिंदी शब्दों का ग्रहण हुआ है। इसी प्रकार हिंदी में अरबी, तुर्की और पुर्तगाली शब्दों आदि के आगमन के कारण जानने के लिए राजनीतिक इतिहास से सामग्री प्राप्त होती है। इनसे एक-दूसरे के राजनीतिक और सांस्कृतिक संबंधों का ज्ञान प्राप्त होता है। अतः कहा जा सकता है भाषाविज्ञान और राजनीतिक इतिहास का घनिष्ठ संबंध है और दोनों ही एक दूसरे के अध्ययन में सहायता पहुंचाते हैं।

किसी देश में किसी अन्य देश का राज्य होना दोनों ही देशों की भाषाओं को प्रभावित करता है। राजनीतिक इतिहास के द्वारा हम हिंदी में अरबी, फारसी, अंग्रेजी, तुर्की और पुर्तगाली आदि शब्दों के आगमन का इतिहास बता सकते हैं। दुदीप समूह की भाषा तथा वहाँ के नामों में संस्कृत शब्दों का आधिक्य होना, भारत से यहां के सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संबंध की ओर स्पष्ट संकेत करता है।

(ख) धार्मिक इतिहास -

धर्म के रूप परिवर्तन का भी भाषा पर प्रभाव पड़ता है। भारत में हिंदी-उर्दू समस्या धर्म या सांप्रदायिकता के कारण ही है। इधर वैदिक कर्मकांड या 'यज्ञ' आदि का लोकधर्म से समाप्त हो जाने के कारण अनेक शब्द, जो कभी प्रचलित रहे होंगे, आज अज्ञात हैं। व्यक्तिवाचक नामों को भी धर्म प्रभावित करता है, या फिर बंगला और मराठी में ब्रज भाषा शब्दों के प्रवेश का भी यही कारण है। धर्म के कारण ही अनेक बोलियां महत्त्वपूर्ण होकर भाषा बन जाती हैं। इसके उदाहरण मध्ययुगीन ब्रज एवं अवधी बोलियाँ हैं। दूसरी ओर धर्म की अनेक समस्याओं को हल करने में भाषाविज्ञान सहायक सिद्ध होता है। दो देशों के एक-दूसरे पर धार्मिक प्रभाव के अध्ययन में धर्म संबंधी शब्द बड़े सहायक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार भाषाविज्ञान और धार्मिक इतिहास एक-दूसरे के सहायक बनकर हमारे सामने आते हैं। धर्म या संप्रदाय पर अश्रित इतिहास भाषा संबंधी अनेक समस्याओं का उत्तर देता है; जैसे, भारत में हिंदी उर्दू समस्या, हिंदुओं की भाषा में संस्कृत शब्दों की बहुलता और मुसलमानों की भाषा में अरबी-फारसी के शब्दों की अधिकता आदि। भाषाविज्ञान के अध्ययन से ही धर्म के प्राचीन रूप का ज्ञान होता है। धर्म और संप्रदाय भी भाषा को प्रभावित करते हैं।

- ♦ भारत में भाषा पर धर्म का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है।
- ♦ हिंदुओं की भाषा में संस्कृत शब्दों की अधिकता
- ♦ मुसलमानों की भाषा में अरबी-फारसी शब्दों की अधिकता
- ♦ हिंदी-उर्दू विवाद भी धार्मिक इतिहास से जुड़ा हुआ है।
- ♦ भाषाविज्ञान की सहायता से, हम प्राचीन धर्मों और उनके स्वरूप को समझ सकते हैं। धार्मिक ग्रंथों की भाषा के आधार पर उनके काल और स्वरूप का निर्धारण कर सकते हैं।

(ग) सामाजिक इतिहास –

सामाजिक परंपराओं, रूढ़ियों और व्यवस्था का प्रभाव भाषा पर पड़ता है; साथ ही, भाषा सामाजिक इतिहास पर प्रकाश डालती है। हम कह सकते हैं कि प्राचीन साहित्य में पति-विहीन स्त्री के लिए 'विधवा' शब्द का पाया जाना और पत्नीविहीन पुरुष के लिए कोई शब्द न मिलना, तत्कालीन समाज में स्त्री के लिए पक्षपातपूर्ण व्यवस्था का द्योतक है। इससे एक तथ्य सामने आता है कि विधवा के लिए पुनर्विवाह की व्यवस्था न थी किंतु पत्नी विहीन पति के लिए शब्द न मिलना पुनर्विवाह हो जाने की व्यवस्था का ही सूचक है। प्रागैतिहासिक खोजों के लिए भाषा कई-कई प्रकार से नए आयाम खोलती हैं; जैसे भारोपीय परिवार की भाषाओं के अध्ययन के आधार पर भारोपीय मूल निवासियों के जीवन पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। संस्कृत या अंग्रेजी में मौसी, बूआ आदि के लिए स्वतंत्र शब्द मिलते हैं, किंतु मौसा, फूफा आदि के लिए कोई शब्द न मिलना इस बात का परिचायक है कि तत्कालीन कौटुम्बिक व्यवस्था में 'मौसा', 'फूफा' आदि के लिए परिवार में विशेष स्थान प्राप्त न था। इसलिए इन शब्दों की उस समय विशेष आवश्यकता भी न थी। बाद में, आवश्यकतानुसार ये शब्द बना लिए गए हैं। इस प्रकार भाषाविज्ञान और इतिहास का घनिष्ठ संबंध है।

इतिहास, सामाजिक इतिहास को प्रस्तुत करता है। समाज में प्रचलित परंपराएँ किस प्रकार भाषा को प्रभावित करती हैं; यह सामाजिक इतिहास के द्वारा ही ज्ञात होता है। जिस प्रकार भारतीय भाषाओं में माता-पिता आदि के अतिरिक्त जीजा - जीजी, साला-साली, चाचा-चाची, नाना-नानी आदि शब्दों की अधिकता है, उसी प्रकार विदेशी भाषाओं में इतने संबंध बोधक शब्दों का अभाव पाया जाता है। अंग्रेजी का Brother-in-law शब्द जीजा, साला आदि अनेक शब्दों के लिए प्रयुक्त होता है। इन उदाहरणों से सामाजिक व्यवस्था का परिचय मिलता है। जैसा की हमने देखा भारतीय भाषाओं में 'विधवा' शब्द का होना, पर बहुत देर तक 'विधूर' शब्द का आगमन न होना इसी का द्योतक है।

भाषाविज्ञान के माध्यम से हम प्राचीन अभिलेखों, शिलालेखों, सिक्कों आदि का अध्ययन करके इतिहास के अज्ञात पक्षों पर प्रकाश डालते हैं। वहीं इतिहास भाषा के उद्भव, विकास और परिवर्तन को समझने में सहायता करता है। अतः यह स्पष्ट है कि भाषा और इतिहास एक-दूसरे के बिना अधूरे हैं।

संक्षिप्त निष्कर्ष

- ♦ भाषाविज्ञान और इतिहास एक-दूसरे के पूरक हैं।
- ♦ राजनीतिक और धार्मिक घटनाएँ भाषा के विकास को प्रभावित करती हैं।
- ♦ भाषाविज्ञान इतिहास के अंधकारमय पक्षों को उजागर करता है, जबकि इतिहास भाषा के विकास को समझने में मदद करता है।

3.5) भाषाविज्ञान और मनोविज्ञान -

भाषाविज्ञान और मनोविज्ञान का बहुत गहरा संबंध है। भाषा के माध्यम से मानव अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। भाव निश्चित रूप से मन और मस्तिष्क से निःसृत होते हैं। इस प्रकार भाषाविज्ञान भाषा को सुलझाने के लिए मनोविज्ञान का बहुत सहारा लेने की अपेक्षा करता है। वाक्य विज्ञान और ध्वनि विज्ञान में इनके परिवर्तनों के कारणों और दिशाओं में मनोविज्ञान से सहायता प्राप्त करनी पड़ती है। इसी प्रकार 'अर्थ' के प्रकरण में मनोविज्ञान सहायक सिद्ध होता है। सीधे शब्दों में, भाषा के अंगों में भाव के स्तर पर प्रयोग होता है और भावों का सीधा संबंध मन और मस्तिष्क से होता है, जिनके ज्ञान के लिए मनोविज्ञान भाषा वैज्ञानिक की सहायता करता है। भाषा की उत्पत्ति, विकास एवं सीखने में, विशेष रूप से बालकों को भाषा सिखाने में मनोविज्ञान हमारी सहायता करता है। दूसरी ओर मनोविज्ञान भी अपनी गुंथियाँ सुलझाने में भाषाविज्ञान की सहायता लेता है। उदाहरण के लिए - पागलों के ऊल-जलूल वाक्यों के विश्लेषण में मनोवैज्ञानिक को भाषाविज्ञान की सहायता लेनी पड़ती है। मनोविज्ञान ने ही यह बतलाया है कि भाषा का रूप शब्दमय और विचारमय दो प्रकार का होता है। अब तो दोनों के आपसी संबंध को महत्व को ध्यान में रखकर भाषा मनोविज्ञान (Linguistic Psychology) या मनोभाषाविज्ञान (Psycholinguistic) मनोविज्ञान की एक नई शाखा के रूप में विकसित हो गई है।

इसतरह भाषाविज्ञान में भाषा का अध्ययन किया जाता है और मनोविज्ञान में मनुष्य के मन का अध्ययन किया जाता है। मनोविज्ञान इस बात का विश्लेषण करता है कि मन की गति किस प्रकार होती है? किस प्रकार विचार उठते हैं? और किस प्रकार अभिव्यक्त होते हैं? भाषा का आधार विचार या भाव है? विचारों की अभिव्यक्ति के लिए ही भाषा का प्रयोग किया जाता है। भाषा के मूल में विचार और विचारों का साधन मन है। अतः मनोविज्ञान का भाषा एवं भाषाविज्ञान से घनिष्ठ संबंध है।

इसके अतिरिक्त वाक्य विज्ञान, रूप विज्ञान तथा ध्वनि परिवर्तन में भी मनोविज्ञान बहुत सहायता करता है। अशोभन प्रयोगों के स्थान पर जो शोभन प्रयोग आता है; जैसे मैदान जाना, पांव भारी होना, गंगा नहा जाना आदि शब्दों के प्रयोग के पीछे मनोविज्ञान है। इनकी व्याख्या मनोविज्ञान के आधार पर ही होती है। भाषा की उत्पत्ति और प्रारंभिक रूप की जानकारी में भी मनोविज्ञान विशेषतः बाल मनोविज्ञान बहुत सहायता करता है।

दूसरी ओर भाषाविज्ञान भी मनोविज्ञान की कम सहायता नहीं करता। मनोविकृत व्यक्तियों के मनोविश्लेषण में भाषाविज्ञान से पर्याप्त सहायता मिलती है। भाषाविज्ञान के आधार पर ही एक मनोविश्लेषक, रोगी मन की मानसिक गुंथियों और ग्रंथियों को सुलझाकर उसे स्वस्थ बनाता है। दोनों के इस घनिष्ठतम संबंध के कारण ही भाषाविज्ञान में मनोविज्ञान की एक नई शाखा विकसित हो गई है; जिसे 'मनोभाषाविज्ञान' कहते हैं।

3.6) भाषाविज्ञान और भूगोल-

भाषाविज्ञान और भूगोल का गहरा संबंध है। भूगोल भाषाविज्ञान के लिए बड़ी मनोरंजक सामग्री प्रस्तुत करता है; जैसे नदियों, नगरों, देशों आदि के नामों के रूप में सामग्री देना। भूगोल के आधार पर बहुत-से पेड़-पौधे आदि अस्तित्व में होने के कारण अनेक नए नाम हमारे सामने आते हैं। उनके लोप हो जाने पर ये नाम भी लोप हो जाते हैं, जैसे- 'सोमलता' का नाम शायद इसीलिए जीवित भाषा में न हो। इसी प्रकार क्षेत्र के आधार पर जानवर, पक्षी, अन्न आदि के नामों का विकास होता है। क्षेत्र और उसके आकार एवं प्राकृतिक दशाएं - नदी, पहाड़ आदि बाधाएँ भाषा के प्रसार में बाधक बनती हैं। यही कारण है कि जंगली और पहाड़ी जातियों

में अनेक नवीन बोलियों का प्रसार हो जाता है। इसका कारण उनका आपस में न मिल सकना या कम मिलना है। अर्थ विचार में भी भूगोल भाषाविज्ञान की सहायता करता है। 'उष्ट्र' का अर्थ 'भैंसा' से ऊँट कैसे हो गया या 'सैंधव' का अर्थ 'नमक' ही क्यों हुआ; आदि समस्याओं पर विचार करने के लिए भूगोल की सहायता की अपेक्षा होती है। कुछ लोग उच्चारण अवयवों की विभिन्नता का कारण भौगोलिक मानते हैं, जो आधुनिक युग में अधिक उपयुक्त नहीं जान पड़ता। इधर 'भाषा-भूगोल' शाखा तो भूगोल के और भी निकट है और इसकी अध्ययन पद्धति भी भूगोल की पद्धति पर ही बहुत कुछ आश्रित है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए भूगोल से पर्याप्त सामग्री प्राप्त होती है। दूसरी ओर भूगोल के प्रागैतिहासिक अध्ययन के लिए भाषाविज्ञान भी भूगोल की सहायता करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषाविज्ञान मानव द्वारा अविष्कृत विभिन्न शास्त्रों एवं विज्ञानों से अपने अध्ययन की सामग्री ग्रहण करता है और उन्हें प्रभावित करता है। डॉ. मनमोहन गौतम के शब्दों में, भाषाविज्ञान का सूक्ष्म से सूक्ष्म विज्ञान, मनोविज्ञान से लेकर ठोस भौतिक विज्ञान तक से प्रत्यक्ष या परोक्ष संबंध अवश्य है। इसका एक कारण है और वह यह कि भाषा मनुष्य की भाव अथवा विचाराभिव्यक्ति की शक्ति है। वाणी मनुष्य की चेतना का प्रतीक है। अरूप भावों को शब्द अथवा ध्वनि रूप देने का श्रेय उसी को है। इसीकारण समस्त ज्ञान-विज्ञान की एक मानव के मस्तिष्क तथा प्रेषणीयता उसी के द्वारा संभव है। अतः भाषा को ही अध्ययन का विषय बनाने वाले भाषाविज्ञान का संबंध सभी विज्ञानों से होना स्वाभाविक है।

भाषाविज्ञान का भूगोल से बहुत ही करीबी संबंध है। भौगोलिक परिस्थितियों का स्थानीय लोगों की भाषा पर काफी प्रभाव पड़ता है। भाषा के उच्चारण में विविधता आती है। शीत प्रधान देशों में शीत के कारण मुँह कम खोलने के अभ्यास से उच्चारणों में अस्पष्टता रहती है। उदा. ठंडे देशों में दन्त्य ध्वनियाँ (त, थ, द) स्पष्ट नहीं आती बल्कि उसके स्थान पर वत्स्ये ध्वनियाँ (ट, ठ, ड) बोली जाती है, कारण उनका वाक्यंत्र इतना अधिक खुल नहीं पाता। लेकिन उष्ण देश में सरलता से मुँह खोलने के कारण उच्चारणों में अधिक स्पष्टता तथा ध्वनियों की अधिकता रहती है। इन ध्वनि परिवर्तनों का ज्ञान भाषाविज्ञान के कारण हो सकता है।

किसी स्थान में एक भाषा का दूर तक प्रसार न होना, भाषा में कम विकास होना तथा किसी स्थान में बोलियों का अधिक होना भी भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करता है। जहाँ दुर्गम पहाड़ एवं रेगिस्तान होंगे तथा गहरे समुद्र होंगे, स्वभावतः उनके दोनों ओर के लोगों में वैचारिक आदान-प्रदान कम होता है वहाँ भाषा के प्रसार या उसमें परिवर्तन की संभावना कम रहती है। पहाड़ी तथा जंगली लोगों में परस्पर संपर्क कम होने के कारण प्रायः अधिक खुल नहीं पाता। लेकिन उष्ण देश में सरलता से मुँह खोलने के कारण उच्चारणों में अधिक स्पष्टता तथा ध्वनियों की अधिकता रहती है। इन ध्वनि परिवर्तनों का ज्ञान भाषाविज्ञान के कारण हो सकता है।

अर्थ विज्ञान में भी भूगोल भाषाविज्ञान की सहायता करता है। जिस क्षेत्र में जो वस्तु पैदा होती है उसका नामकरण उसी के आधार पर किया जाता है। कश्मीर में 'केसर' अधिक पैदा होती है। इसी आधार पर ही शायद कश्मीर को 'कश्मीर' नाम पड़ा है। सदैव से बर्फ से ढका रहने के कारण, 'हिमालय', पांच नदियों के कारण, पंजाब; अनेक राज्यों के भू-भाग से संबंधित होने के कारण, 'राजस्थान' आदि। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि अर्थ विज्ञान में भी भूगोल भाषाविज्ञान की सहायता करता है। 'उष्ट्र' का अर्थ 'भैंसा' से 'ऊँट' कैसे हो गया। सैंधव का अर्थ घोड़ा और नमक ही क्यों हुआ। संस्कृत में कश्मीर का अर्थ केसर क्यों है? आदि बातों का समाधान निकालने के लिए भूगोल भाषाविज्ञान का सहायक होता है।

भाषाभूगोल का प्रमुख काम है भाषाओं का सीमांकन । जिसके लिए भाषिक सर्वेक्षण को आधार बनाता है । भारतीय संघ में राज्यों की रचना भाषाओं के आधार पर की गयी है । भाषिक सीमांकन की आवश्यकता राजनैतिक सीमाओं को ही भाषिक सीमाएँ मान लिया जाय किंतु भाषाभूगोल इस प्रकार के स्थूल सीमांकन को प्रामाणिक नहीं मानता । इसका कारण भाषाओं और बोलियों की सीमाएँ राजनैतिक सीमाओं की तरह स्पष्ट नहीं होती । सामान्यतया दोनों भाषाओं की सीमा पर काफी बड़ा क्षेत्र ऐसा होता है, जहाँ उन भाषाओं को मिला-जुला रूप प्रचलित होता है । जैसे-जैसे हम एक भाषा के क्षेत्र से दूसरी भाषा के क्षेत्र की ओर बढ़ते हैं, वैसे-वैसे पहली भाषा का प्रभाव कम होता जाता है और एक बिंदु पर पहुँचकर पूर्णतया समाप्त हो जाता है । इस प्रदेश को संधिक्षेत्र कहते हैं । यह संधिक्षेत्र कितना बड़ा है इस विषय में कोई सुनिश्चित नियम नहीं बनाया जाता । मैदानी प्रदेशों में संधि क्षेत्र अधिक विस्तृत होता है । सघन जनसंख्या वाले प्रदेशों में यह विस्तार और बढ़ जाता है । इसके विपरीत नदियों, वन-पर्वतों वाले क्षेत्रों में संधिक्षेत्र छोटा होता है ।

कालगत और स्थानगत भाषिक परिवर्तन के दो प्रकार होते हैं । कालगत परिवर्तन में वैदिक भाषा से लेकर आधुनिक हिन्दी तक की विकास यात्रा का परिणाम है । स्थानगत परिवर्तन में आधुनिक प्रादेशिक भाषाओं के विभिन्न रूप आते हैं । भाषा के कालगत विकास का अध्ययन ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का विषय है । स्थानगत परिवर्तन का अध्ययन भाषाभूगोल का विषय है । याने भाषाभूगोल भाषाओं और बोलियों के सीमा निर्धारण तथा तत्संबंधी बातों का अध्ययन करनेवाला विज्ञान है । बोलियों की सीमा रेखा और संधि क्षेत्र को अंकित करना भाषाभूगोल की एक शास्त्रीय पद्धति है, जिसे बोली मानचित्रावली के निर्माण की पद्धति कहते हैं । यह कर्म सर्वेक्षण के द्वारा किया जाता है । संधिक्षेत्र को अंकित करने की एक पद्धति में खड़ी और आड़ी रेखाओं से दोनों भाषाओं का क्षेत्र दिखाया जाता है और संधि क्षेत्र में ये रेखाएँ एक दूसरी को काटती हैं और वह क्षेत्र ग्राफपेपर की सी वर्गाकार आकृतियों से अंकित हो जाता है ।

भाषाभूगोल के कार्य या उपयोगिता (प्रयोजन) :

‘भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा का स्वरूप-विकास’ इस ग्रंथ में डॉ. देवेन्द्रप्रसाद सिंह ने भाषाविज्ञान की उपयोगिता निम्न प्रकारों में स्पष्ट की है -

सीमानिर्धारण : संसार में भाषा की संख्या लगभग तीन हजार है । इन भाषाओं को प्रमुख भाषा परिवारों में वर्गीकृत भी किया गया है । भाषाओं के वर्गीकरण के चाहे जितने प्रकार बनाएँ - सब की उपयोगिता है । भाषाओं के अध्ययन की सुविधा संसार की सैंकड़ों भाषाएँ सीमा की दृष्टि से एक दूसरे के आस-पास पड़ती हैं और एक दूसरे को प्रभावित भी करती हैं, कोई भाषा अपनी पार्श्ववर्ती भाषा से इतनी प्रभावित हो जाती है, उसमें निर्जीवरूप लगभग परिवर्तित हो गया सा है । जैसे हिन्दी बंगला की सीमा जहाँ मिलती है, हिन्दी पर बंगला का प्रभाव है, वहाँ निश्चय करना कठिन हो जाता कि यह हिन्दी है या बंगला ? व्यापक रूप में संसार की भाषाओं के साथ यह समस्या है और इस दृष्टि से ‘भाषाभूगोल’ इस समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है । तुलनात्मक आधार यह निश्चय कर देता है कि किस भाषा की सीमा कहाँ तक मानी जाए ।

महत्त्व निर्धारण : सभी भाषाएँ समान महत्त्व की नहीं होती । अंग्रेजी के समक्ष संसार की सभी भाषाएँ महत्त्व की दृष्टि से गौण हैं । हिन्दी का जितना महत्त्व है, उतना संथाली का नहीं । भाषाओं का महत्त्व निर्धारण अनेक दृष्टियों से होता है, जिनमें प्रमुख है राजनीतिक दृष्टि, सामाजिक दृष्टि, आर्थिक दृष्टि, सांस्कृतिक दृष्टि, समाजशास्त्रीय

दृष्टि, कूटनीति दृष्टि आदि। भाषाओं का महत्त्व निरूपित करना भाषा भूगोल का अनिवार्य कार्य है।

सूचक : भाषाभूगोल की सीमा में भाषाविज्ञान के सभी अंगोंका अध्ययन आता है। भाषा में परिवर्तन पार्श्ववर्ती, भाषाओं के प्रभाव से भी होता है। कोई भाषा किस प्रकार पार्श्ववर्ती भाषा को प्रभावित करती है यह सूचना भी भाषाभूगोल की सीमा में समाहित है। किसी भी देश के लिए राष्ट्रीय जागरण, सांस्कृतिक जागरण बहुत ही महत्त्व रखता है। राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जागरण का अविर्भाव किसी देश में भाषाविशेष या भाषाओं के कारण होता है। भारत का राष्ट्रीय दृष्टिकोण हिन्दी और भारत की दूसरी भाषाओं में भले ही व्यक्त हुआ, लेकिन इसका आविर्भाव अंग्रेजी के माध्यम से ही हुआ है। भाषाभूगोल का ही कार्य यह बताता है कि किन घटनाओं, किन-किन ऐतिहासिक कारणों के कारण भाषा में परिवर्तन हुआ है। किसी भाषा के प्राचीन रूप, मध्यकालीन रूप और आधुनिक रूप में क्या और कितने परिवर्तन हुए हैं? भाषा की प्रगति के कौन-कौन से साधक कारण हैं और भाषा विकास के अवरोधक कारण कौन-कौन से हैं – यह सूचना भी भाषाभूगोल के द्वारा ही प्रस्तुत की जाती है।

भाषा गणना एवं जनगणना : किसी भाषा के बोलने वालों की कितनी संख्या है – यह भाषिक जनगणना है। संसार में कितनी भाषाएँ हैं – यह भाषा गणना है। संसार में 2796 भाषाएँ हैं या लगभग तीन हजार भाषाएँ हैं – यह भूगोल के आधारपर ही बताना संभव हो सका है। संसार में चीनी भाषा बोलनेवालों की संख्या सबसे अधिक है। अंग्रेजी दूसरे स्थान पर है। जनसंख्या की दृष्टि से हिन्दी का स्थान संसार में तीसरा है। भारत में हिन्दी बोलनेवालों की संख्या सर्वाधिक है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, व्यापारिक दृष्टिसे किसी भाषा का महत्त्व निर्धारण, भाषा बोलनेवालों की संख्या का गणित, संसार की भाषाओं की सीमा भाषाओं की संख्या और उनका सीमा निर्धारण भाषाभूगोल का प्रयोजन है।

4. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न-

प्रश्न 1. निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पाँचों में से उचित पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

- भाषाविज्ञान का वैज्ञानिक अध्ययन है।
A) समाज B) भाषा
C) इतिहास D) साहित्य
- साहित्य का मुख्य उद्देश्य है।
A) नियम बनाना B) अभिव्यक्ति
C) विश्लेषण D) नियंत्रण
- व्याकरण भाषा के और प्रयोग बताता है।
A) सही-गलत B) शुद्ध-अशुद्ध
C) नया-पुराना D) बड़ा-छोटा

4. भाषाविज्ञान प्रकार का विषय है।
 A) वर्णनात्मक B) व्याख्यात्मक
 C) पारंपरिक D) सीमित
5. व्याकरण प्रकार का विषय है।
 A) व्याख्यात्मक B) वैज्ञानिक
 C) वर्णनात्मक D) आधुनिक
6. भाषा एक संपत्ति है।
 A) व्यक्तिगत B) सामाजिक
 C) ऐतिहासिक D) मानसिक
7. भाषा का जन्म में होता है।
 A) विद्यालय B) घर
 C) समाज D) पुस्तक
8. आप, तुम, तू स्तर को दर्शाते हैं।
 A) आर्थिक B) सामाजिक
 C) राजनीतिक D) भौगोलिक
9. मनोभाषाविज्ञान और के संयुक्त अध्ययन से बना है।
 A) भाषा-इतिहास B) भाषा-समाज
 C) भाषा-मनोविज्ञान D) भाषा-भूगोल
10. भाषा के पुराने रूप से प्राप्त होते हैं।
 A) समाज B) इतिहास
 C) भूगोल D) विज्ञान
11. राजनीतिक प्रभाव से भाषा में शब्दों का प्रवेश होता है।
 A) स्थानीय B) विदेशी
 C) कठिन D) प्राचीन
12. धर्म के प्रभाव से भाषा में परिवर्तन होते हैं।
 A) आर्थिक B) सामाजिक
 C) धार्मिक D) भौगोलिक

13. विधवा शब्द स्थिति को दर्शाता है।
 A) आर्थिक B) सामाजिक
 C) धार्मिक D) राजनीतिक
14. भाषा के प्रसार में बाधाएँ प्रभाव डालती हैं।
 A) सामाजिक B) मानसिक
 C) भौगोलिक D) आर्थिक
15. पर्वत और नदियाँ बाधाएँ हैं।
 A) सामाजिक B) भौगोलिक
 C) मानसिक D) सांस्कृतिक
16. भाषाविज्ञान और समाजविज्ञान का संबंध होता है।
 A) कमजोर B) सीमित
 C) घनिष्ठ D) असंबंधित
17. भाषा का दर्पण है।
 A) इतिहास B) समाज
 C) संस्कृति D) व्यक्ति
18. भाषाविज्ञान का क्षेत्र होता है।
 A) संकीर्ण B) सीमित
 C) व्यापक D) छोटा
19. व्याकरण का निर्धारण करता है।
 A) इतिहास B) नियम
 C) समाज D) विचार

5. पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ -

1. भाषाविज्ञान - भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन
2. ध्वनि विज्ञान - भाषा की ध्वनियों का अध्ययन
3. रूप विज्ञान- शब्दों के रूपों का अध्ययन
4. वाक्य विज्ञान - वाक्य संरचना का अध्ययन
5. अर्थ विज्ञान- शब्दों के अर्थ का अध्ययन
6. अभिव्यक्ति - विचारों और भावों को भाषा में व्यक्त करना

7. साहित्य - भाषा के माध्यम से रचित रचनात्मक अभिव्यक्ति
8. व्याकरण- भाषा के शुद्ध-अशुद्ध प्रयोगों के नियमों का शास्त्र
9. वर्णनात्मक (Descriptive)- भाषा के नियमों का वर्णन करने वाला
10. व्याख्यात्मक (Explanatory) - भाषा के प्रयोगों का कारण बताने वाला
11. साधुता- शुद्ध भाषा प्रयोग
12. असाधुता- अशुद्ध भाषा प्रयोग
13. समाज- व्यक्तियों का समूह जो परस्पर संबंधों में बंधा हो
14. सामाजिक संपत्ति - समाज द्वारा निर्मित और उपयोग की जाने वाली वस्तु (भाषा)
15. भाषा-परिवर्तन - समय और समाज के अनुसार भाषा में बदलाव
16. आदरार्थ/अनादरार्थ - सामाजिक स्तर के अनुसार भाषा प्रयोग
17. मनोविज्ञान - मन और मस्तिष्क का अध्ययन
18. मनोभाषाविज्ञान (Psycholinguistics) - भाषा और मन के संबंध का अध्ययन
19. शब्दमय रूप- भाषा का बाह्य (verbal) रूप
20. विचारमय रूप - भाषा का मानसिक रूप
21. राजनीतिक इतिहास - शासन और सत्ता से संबंधित इतिहास
22. धार्मिक इतिहास - धर्म और आस्था से संबंधित इतिहास
23. सामाजिक इतिहास- समाज की परंपराओं और जीवन शैली का इतिहास
24. भारोपीय भाषा परिवार - एक ही मूल से विकसित भाषाओं का समूह
25. भाषा-भूगोल- भाषा के क्षेत्रीय वितरण का अध्ययन
26. भौगोलिक बाधाएँ - पर्वत, नदियाँ आदि जो भाषा के प्रसार को रोकती हैं
27. क्षेत्रीय बोली- किसी विशेष क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा
28. अन्योन्याश्रित - एक-दूसरे पर निर्भर
29. प्रगतिवादी- परिवर्तन को स्वीकार करने वाला
30. पुराणमतवादी - परंपराओं को मानने वाला

6. स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर -

- | | | |
|-------------------|-----------------|----------------------|
| 1 - भाषा, | 2 - अभिव्यक्ति, | 3 - शुद्ध-अशुद्ध, |
| 4 - व्याख्यात्मक, | 5 - वर्णनात्मक, | 6 - सामाजिक, |
| 7 - समाज, | 8 - सामाजिक, | 9 - भाषा मनोविज्ञान, |
| 10 - इतिहास, | 11 - विदेशी, | 12 - धार्मिक, |

- | | | |
|---------------|---------------|---------------|
| 13 - सामाजिक, | 14 - भौगोलिक, | 15 - भौगोलिक, |
| 16 - घनिष्ठ, | 17 - समाज, | 18 - व्यापक, |
| 19 - नियम | | |

7. सारांश -

1. भाषाविज्ञान का विभिन्न ज्ञान-विज्ञानों से अत्यंत घनिष्ठ संबंध है, क्योंकि भाषा मानव जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ी होती है।
2. साहित्य और भाषाविज्ञान एक-दूसरे के पूरक हैं। साहित्य भाषा की सामग्री देता है और भाषाविज्ञान उसके अर्थ व संरचना को स्पष्ट करता है।
3. व्याकरण और भाषाविज्ञान में अंतर होते हुए भी दोनों परस्पर निर्भर हैं। व्याकरण नियम बताता है, जबकि भाषाविज्ञान भाषा का वैज्ञानिक विश्लेषण करता है।
4. समाजविज्ञान से यह स्पष्ट होता है कि भाषा एक सामाजिक संपत्ति है और समाज के परिवर्तन के साथ भाषा भी बदलती रहती है।
5. मनोविज्ञान भाषा को मन और मस्तिष्क से जोड़ता है; भाषा के विकास, अर्थ और अधिगम को समझने में सहायक है, जिससे मनोभाषाविज्ञान का विकास हुआ।
6. इतिहास भाषा के पुराने रूपों, शब्दों और उनके परिवर्तन का आधार प्रदान करता है तथा राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियाँ भाषा को प्रभावित करती हैं।
7. भूगोल भाषा के प्रसार, क्षेत्रीय भेद और शब्दों के अर्थ परिवर्तन को प्रभावित करता है।
8. भाषा मानव की भाव और विचार अभिव्यक्ति का माध्यम है, इसलिए भाषाविज्ञान का संबंध लगभग सभी विज्ञानों से स्वाभाविक रूप से जुड़ा हुआ है।

8. स्वाध्याय-

1. भाषाविज्ञान का अन्य ज्ञान-विज्ञानों से संबंध विस्तार से समझाइए।
2. भाषाविज्ञान और साहित्य के पारस्परिक संबंध पर प्रकाश डालिए।
3. भाषाविज्ञान और इतिहास के संबंध को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
4. भाषाविज्ञान और समाजविज्ञान के संबंध का विवेचन कीजिए।

9. क्षेत्रीय कार्य ।

1. अपने आसपास (परिवार/मित्र/समाज) में प्रयुक्त भाषा का अवलोकन कीजिए।
2. अलग-अलग आयु वर्ग (बच्चे, युवा, बुजुर्ग) के भाषा प्रयोग में अंतर लिखिए।
3. आदर सूचक शब्द (आप, तुम, तू) के प्रयोग के उदाहरण एकत्र कीजिए।
4. अपनी मातृभाषा/स्थानीय भाषा में कम से कम २०-३० बदले हुए शब्द खोजिए।

10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए-

1. तिवारी, भोलानाथ, (२०११), भाषाविज्ञान, इलाहाबाद, किताब महल।
2. बाहरी, हरदेव, (२०००), हिंदी भाषा और उसका विकास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन।
3. शर्मा, रामविलास, (१९९४), भाषा और समाज, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन।
4. वाजपेयी, किशोरीदास, (२००५), हिंदी शब्दानुशासन, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा।
5. सिंह, नामवर, (२००८), भाषा और साहित्य, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
6. द्विवेदी, कपिलदेव, (२०१०), भाषाविज्ञान के सिद्धांत, दिल्ली, विश्वविद्यालय प्रकाशन।
7. गौतम, मनमोहन, (२०१२), भाषाविज्ञान, स्वरूप एवं सिद्धांत, जयपुर, साहित्यागार।

